# कमला नेहरू महिला महाविद्यालय ; भुबनेश्वर

## हिंदी विभाग ; ई – पत्रिका

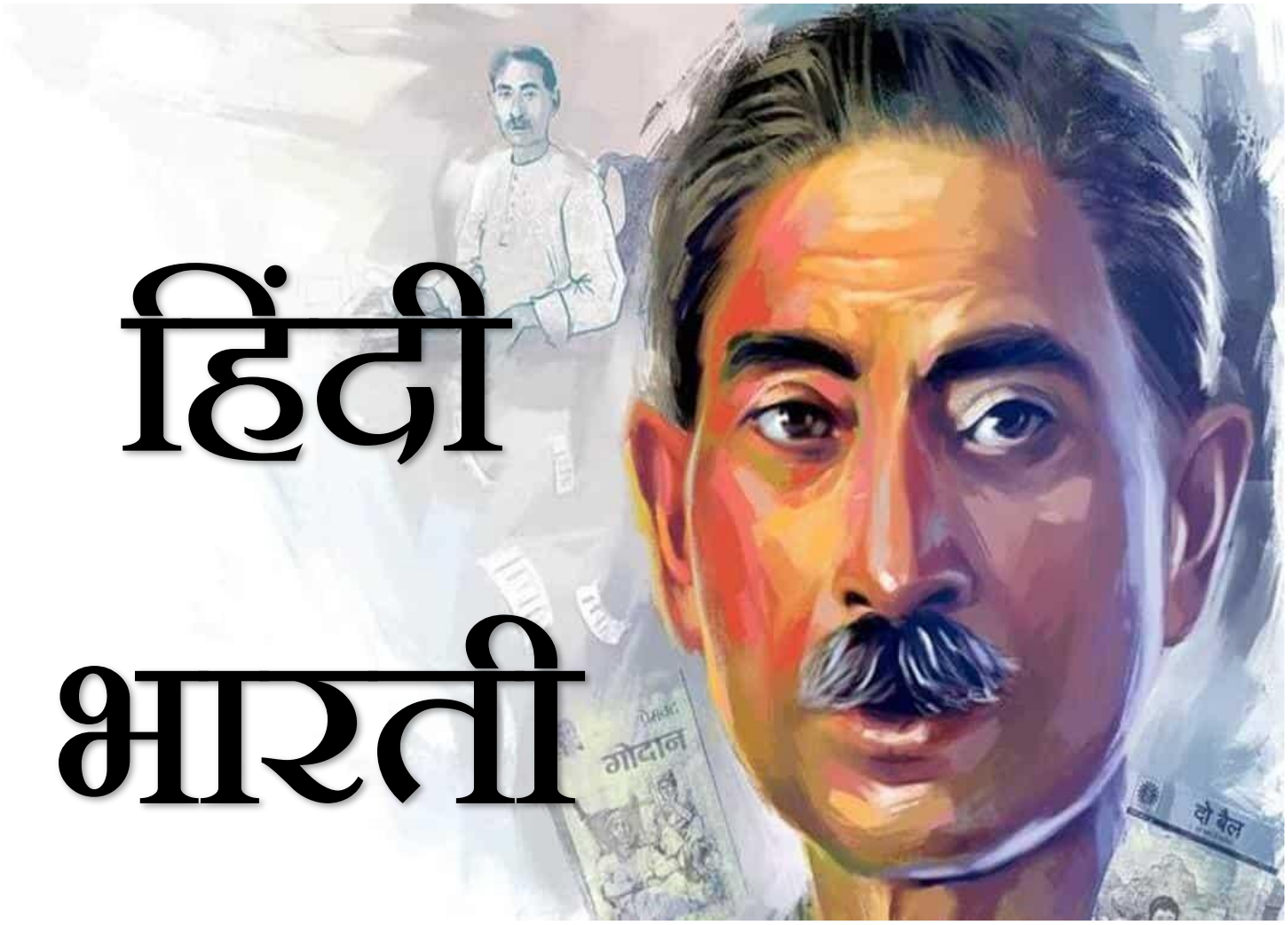


# हिंदी भारती

**मई, जून - 2020**

# संपादक मंडली

संपादक : डॉ. वेदुला रामालक्ष्मी

सह – संपादक : कु. हाफिज़ा बेगम

कु. बर्षा प्रियदर्शिनी

कु. बांगी हंसदा

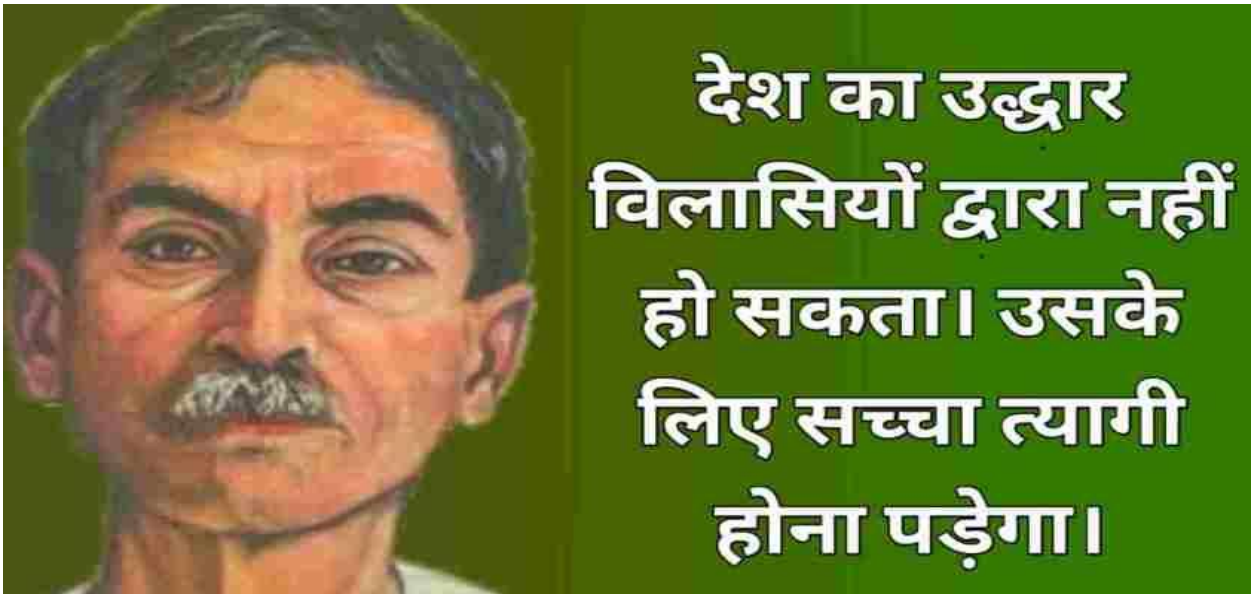

# संपादकीय

कोविड-19 एक वैश्विक महामारी के रूप में सारे संसार को अपनी चपेट में ले चुका है। हम सब का जीवन संपूर्ण रूप से बदल चुका है। माना यह महामारी अब बहुत दिनों तक हमें नहीं सताएगी। जल्दी ही पृथ्वी से विदा हो जाएगी। पर जाते जाते यह अपनी छाप जरूर हम पर छोड़ जाएगी। अब जो बदलाव हम अपने जीवन में महसूस कर रहे हैं, आने वाले समय में और अधिक बदलाव हमारे जीवन में होंगे। कुछ ऐसे जो अच्छे होंगे, कुछ ऐसे जिन्हें हमें अपनाना ही होगा, और कुछ ऐसे जो शायद हमारे लिए अच्छे ना हो पर हम इनसे बच नहीं पायेंगे। हमें अब इनकी आदत डालनी होगी। हम अपने जीवन को रोक नहीं सकते, बल्कि इनको अपनाते हुये हमें अब चलना होगा। इसी वजह से अब हमने अपने महाविद्यालय में ऑनलाइन कक्षाओं के माध्यम से पढ़ाना शुरू कर दिया है। जो संगोष्ठी हुआ करती थी उनकी जगह अब वह गोष्ठियों ने ले ली है। ऐसी विकट परिस्थितियों में हम प्रयास कर रहे हैं अपने संस्कारों, परंपराओं, भावनाओं तथा मूल्यों की थाती को पकड़ कर रखें, क्योंकि हमारा यह विश्वास है दुनिया चाहे जितनी ही क्यों न बदल जाए पर हमारे संस्कार, परंपराएं, भावनाएं और मूल्य हमारे अस्तित्व की पहचान है। कमला नेहरू महिला महाविद्यालय भुवनेश्वर के का हिंदी विभाग आपके समक्ष अपनी ई - पत्रिका 'हिंदी भारती' के नए अंक के साथ आपके समक्ष प्रस्तुत है। हालांकि यह अंक जून के महीने में ही प्रकाशित होना चाहिये था, पर हमने कथा सम्राट प्रेमचंद जी की जयंती के अवसर पर पत्रिका का विमोचन करना चाहा। इस पत्रिका में विभाग की छात्राओं की अलग-अलग अनुभूतियां अभिव्यक्त हुई हैं। आशा है आप इन्हें हमेशा की तरह सराहेंगे और इन छात्राओं को अपना आशीर्वाद देंगे। कृपया पत्रिका पढ़ने के बाद अपनी राय हमें जरूर भेजिएगा क्योंकि आपकी बात हमारे लिए बहुत महत्वपूर्ण है। आशा है आप हमारा साथ इसी तरह देते रहेंगे। हम आशा करते हैं कि हर अंक की तरह आप इस अंक को भी स्वीकार करते हुए भविष्य में हमारा मार्गदर्शन करते रहेंगे और आपका आदर और स्नेह हमें इसी तरह मिलता रहेगा। अब हमारी पत्रिका आप हमारे महाविद्यालय के वेब साइट www.knwcbbsr.com पर भी पढ़ सकते हैं।

**संपादिका : डॉ. वेदुला रामालक्ष्मी**

# अनुक्रमणिका


| क्र सं. | शीर्षक | विधा | नाम | पृ.स . |
|---|---|---|---|---|
| 1. | कथा सम्राट मुंशी प्रेमचंद | लेख | पिंकी सिंह | 5 |
| 1. | सपनों की उड़ान | कहानी | पिंकी सिंह | 8 |
| 2. | कर्तव्य | कहानी | पिंकी सिंह | 11 |
| 3. | संकट के बादल | कविता | बाँगी हंसदा | 13 |
| 4. | लॉकडाउन | कविता | संगीत प्रधान | 13 |
| 5. | कोरोना का प्रकोप | कविता | हाफिजा बेगम | 14 |
| 6. | बेवजह | कविता | सस्मिता नायक | 14 |
| 7. | भारतीय ग्रामीण जीवन | लेख | स्वाती भोल | 15 |
| 8. | मन की सुंदरता | कहानी | दीप्तिस्मिता साहू | 20 |
| 9. | आज का ज्ञान | लेख | संगीता | 21 |
| 10. | दो आलसी | कहानी | स्वागतिका | 22 |
| 11. | माँ की प्यारी सीख | कहानी | दीप्तिस्मिता साहू | 23 |
| 12. | झाँसी की रानी | कविता | सुभद्रा कु. चौहान<br>संगृहित - राजनंदिनी | 24 |
| 13. | काश लौट आते वे बीते पल | कविता | स्वागतिका | 26 |
| 14. | भोला बचपन | कविता | पूजा डाकुआ | 27 |
| 15. | दिल में वतन | कविता | राजनंदिनी | 27 |
| 16. | लड़ाई | कविता | शरीफा शारवरी | 28 |
| 17. | तुम और मैं | कविता | शरीफा शारवरी | 28 |
| 18. | आत्महत्या : जीवन से पलायन | लेख | लिज़ा मिश्रा | 29 |
| 19. | बड़े घर की बेटी | कहानी | प्रेमचंद | 31 |
| 20. | आपकी बात | आपकी बात | | 39 |
| 21. | बड़े भाई साहब<br>दूध का दाम | यू ट्यूब लिंक | प्रेमचंद | 42 |
| 22. | यादों के गलियारों से | चित्र स्मृतियाँ | | 43 |

# कथासम्राट - मुंशी प्रेमचंद

कहानी कला को एक नवीन दृष्टि देने वाले तथा उपन्यास सम्राट जैसे एक विशिष्ठ पद पर आसीन श्री प्रेमचंद जी का जन्म सन1880 ई. जुलाई 31 को बनारस के पांच, छः मिल दूर लमही ग्राम में हुआ था। परिवार का मुख्य व्यवसाय कृषि था, जिससे पालन पोषण के लिए उपयुक्त आय नहीं हो पाती थी। अतः इनके पिता को विवश हो कर डाकखाने में बीस रुपये मासिक की क्लर्की करनी पड़ी। प्रेमचंद आठ वर्ष के ही थे कि उनकी माता आनन्दी देवी परलोक सिधार गई। प्रेमचंद जी के बचपन का नाम धनपत राय था। किंतु इनके चाचा इन्हें नवाब राय के नाम से पुकारते थे। जिस नाम से उन्होंने पहले उर्दू में साहित्य रचना की थी। घर की आर्थिक अवस्था स्वच्छ न होने पर भी उन्होंने अपनी पढ़ाई के ऊपर कभी इसका प्रभाव पड़ने नहीं दिया। आर्थिक संघर्ष से जूझते जूझते उन्होंने बी.ए. तक की पढ़ाई पूरी की।

पढ़ाई के साथ साथ प्रेमचंद जी के साहित्य के अध्ययन एवं प्रणयन की ओर आरम्भ से ही उनकी रुचि थी। उनकी पत्नी शिवरानी के कथनानुसार बचपन से ही उन्हें पढ़ने लिखने की रुचि थी। "तिलस्म होशरूबा" नामक बृहत तिलस्मी रचना को उन्होंने बड़ी रुचि से पढ़ा। यहीं से उनकी प्रतिभा साहित्य रचना की प्रेरणा ग्रहण कर सकी। सतरह वर्ष की अवस्था तक तो उन्होंने उर्दू के अनेक प्रसिद्ध ग्रंथ पढ़ डाले थे। सरशार द्वारा रचित "फसाने आजाद" तो उनको इतना रुचिकर हुआ कि आगे चलकर उन्होंने उसका हिंदी अनुवाद प्रस्तुत किया। निर्धन होते हुए भी वे परिश्रम एवं ईमानदारी से अर्थोपार्जित करके उपन्यास पढ़ते थे। ज्यों ज्यों आर्थिक कठनाइयाँ भीषण होती गई, उनका अध्ययन से प्रेम बढ़ता ही गया। उनका अध्ययन प्रेम इतना तीव्र हो उठा कि पुराणों के उर्दू अनुवाद भी उन्होंने पढ़ डाले। उनका जीवन पथ पथरीला एवं कंटकाकीर्ण था, उस पर चलते पैर लहूलुहान हो गए। किन्तु उन्होंने लक्ष्य की ओर बढ़ना नहीं छोड़ा। एक सशक्त संकल्प एवं भावुक हृदय लिए वे

ऊबड़ खाबड़ जीवन पथ पर निरंतर बढ़ते चले गए।

प्रेमचंद ने कथा साहित्य को साहित्य सृजन का केंद्र बनाया। कथा साहित्य की ही प्रमुख विधा उपन्यास लेखन से उन्होंने अपने जीवन का समारंभ किया। सं 1901ई. में उन्होंने "प्रेमा" नामक एक उपन्यास उर्दू में लिखा। इसके बाद अन्य अनेक उपन्यास लिख डाले। सं 1904 ई. में उन्होंने कहानी रचना का कार्य भी प्रारंभ कर दिया। उस समय श्री रविन्द्र नाथ ठाकुर की कहानियां अत्यंत लोकप्रिय थी। इसीलिए प्रेमचंद ने उनके कहानियों के उर्दू अनुवाद कर डाले। सं. 1907 में उनकी प्रथम कहानी "संसार का अनमोल रत्न" उर्दू के प्रसिद्ध पत्र जमाना में प्रकाशित हुई। चार पांच कहानियों को लेकर अपनी प्रथम कहानी संग्रह "सोजेवतन" 1906 ई. में प्रकाशित कराया। इस संग्रह की समस्त कहानियों में राष्ट्रीयता मुखर थी। इसीलिए सरकार ने इसे जब्त करके सारी प्रतियाँ जलवा दी, जिसको प्रेमचंद ने नवाब राय नाम से लिखा था।

सोजेवतन के जब्त किए जाने पर इन्होंने प्रेमचंद के नाम से कहानी लिखना प्रारम्भ किया। 1901 ई. से 1915 ई. तक लगभग पौने दो सौ कहानियां लिख डाले। सोजेवतन, प्रेमपचीसी, प्रेमबतीसी, प्रेमचलिसा, खाके परवाना, फिरदौश-ऐ-खयाल और नजात उनकी प्रसिद्ध कहानी संग्रह है।

जैसे कि हम जानते हैं कि प्रेमचंद जी ने उपन्यास लेखन से अपने साहित्य जीवन की प्रारंभ किया था। उन्होंने श्री महावीर प्रसाद पोद्दार की प्रेरणा से "सेवासदन" नामक उपन्यास हिंदी में लिखा और तब से वे निरंतर हिंदी में लिखते चले गए। उनकी लोगप्रियता अनुदित बढ़ती चली गयी। इसके पश्च्यात उन्होंने रूठी रानी, कृष्णा, वरदान और प्रतिज्ञा आदि उपन्यास की रचना की। जो कि 1900 से 1906 के बीच की रचनाएं मानी गयी। सेवासदन उनकी तीसरी औपन्यासिक रचना है। जिसे गोरखपुर में 1916 ई. को प्रकाशित किया गया। प्रेमाश्रम की रचना सं 1918 में हुई, किंतु इसका प्रकाशन 1922 ई. में कोलकाता से हुआ। इस प्रकार निर्मला-1927, रंगभूमि-1925, कायाकल्प-1928, गबन-1930 ई. में प्रकाशित हुआ। कर्मभूमि ओर गोदान क्रमशः 1932 और 1936 ई में प्रकाशित हुए। उनका अंतिम उपन्यास मंगलसूत्र उनकी मृत्यु के कारण अपूर्ण रह गया। इस तरह प्रेमचन्द जी ने उपन्यास क्षेत्र में भी अपना एक विशिष्ट स्थान प्राप्त किया था। जिसके कारण आज उन्हें उपन्यास सम्राट कहा जाता है।

प्रज्जवलित स्वाभिमान से मंडित श्री प्रेमचन्द में संपादन कौशल का भी उन्मेष सजग था। उन्होंने समय समय पर जमाना, ज्ञानमंडल लिमिटेड, वाराणसी द्वारा प्रकाशित मर्यादा, माधुरी, जागरण, और हंस नामक पत्रों का संपादन दायित्व संभाला और उनमें साहित्य के उच्च आदर्शों को स्थान दिया। हंस का प्रकाशन उन्होंने 1930 ई. को किया जब वह रोग शय्या पर पड़े थे। हंस की जमानत के लिए उन्होंने पर्याप्त धन की व्यवस्था की। हंस बंद हो जाए ये उन्हें असह्य था। इस से

अनुमान लगाया जा सकता है कि हंस उन्हें कितना प्रिय था। हंस के खातिर उन्होंने फिल्म जगत में प्रवेश किया। किन्तु उसमें उनको असफलता नहीं मिली।

इस प्रकार सन् 1936 ई. तक कथा साहित्य को न केवल समृद्धि दे कर वरन् उसे नवीन दृष्टि, दिशा विषय देकर शिल्प एवं नवीन शैली से परिवेष्टित कर इस कथा शिल्प सम्राट ने इस संसार से प्रयाण किया। साहित्य के अंतरिक्ष से एक दीप्त सितारा सदैव के लिए बुझ गया। लेकिन उनका आलोक आज भी उनकी रचनाओं में अंकुरित है। उनके इसी कृतित्व के कारण उनके बेटे अमृत राय ने उन्हें कलम की सिपाही कहकर अभिहित किया। जो कि सच में कलम की सिपाही बनकर पूरे साहित्य जगत को अपने लेख के माध्यम से सुरक्षित किया।

**पिंकी सिंह, भूतपूर्वछात्रा**

'पता नहीं क्या हो रहा है मेरी जिंदगी के साथ। बचपन से लेकर जवानी तक सारे काम इन्हीं लोगों की मर्ज़ी से तो करती आई हूँ। पढ़ाई हो कैरियर हो या पहनावे। कभी भी अपनी जिद से किसीको तकलीफ नहीं दी। पर आज मेरे साथ ऐसा क्यों? मेरी मर्ज़ी बिना जाने ही ऐसे कैसे मेरी शादी किसी के साथ भी तय कर सकते हैं ये लोग। जब कि मुझे अभी शादी ही नहीं करनी। 20 साल क्या उम्र होती है शादी की? मेरे सपनों का क्या? मेरे भविष्य का क्या? लगता है सर फट जाएगा मेरा।'

इतने में पीछे से बड़ी बहन पिया की आवाज आई

- "सिया किस से बात कर रही थी?"
- "किसी से नहीं दीदी, आईने के सामने अपने आप से सवाल पूछ रही थी।"
- "यह क्या पागलों जैसी बात कर रही है? क्या पूछ रही थी अपने आप से? "

बहन की आवाज में रूखापन साफ सुनाई दे रहा था। सिया एक ही बात कहते कहते थक गई थी, फिर भी एक और बार कहने में उसे कोई परेशानी नहीं थी।

- "कितनी बार कहूं दीदी कि मुझे अभी शादी नहीं करनी। मेरे अपने कुछ सपने हैं, क्या उन्हें यूँ ही छोड़ दूँ?"
- "अरे क्यों छोड़ देगी? लड़का कह तो रहा है कि शादी के बाद तू जो चाहे कर सकती है। फिर चिंता किस बात की है?"
- "अनजान लड़के का भरोसा किस प्रकार करूँ दीदी?"
- "अनजान कहाँ? हम सब जानते तो हैं उसे। तू भी तो जानती है न?"
- "एक दो मुलाकात क्या काफी है किसीको जानने के लिए?"
- " मैं भी तो तेरे जीजू के साथ अपना जीवन बिता रही हूं न? मुझे तो कोई परेशानी नहीं।'
- " तुम और मैं क्या एक से है दीदी? तुम घर के किसी कोने में पड़ी रहने वाली और मैं खुली आसमान में उड़ने वाली "

- "हाँ पर हम लड़कियों की ज़िंदगी पर हमारी अपनी मर्जी नहीं चलती। जैसी भी हूं, खुश हूं। तू भी रहेगी।"

इतना कहकर पिया वहाँ से चली गयी। उसने सारी बात माँ को बता दी। माँ सिया की तकलीफ समझती थी। उसका सपना जानती थी। पर फिर भी चुप थी, क्योंकि ये फैसला उसके बाबा का था। वही घर चलाते थे और सारे फैसले भी वही लेते थे। उनका कहना है -

- "अगर लड़कियों को ज्यादा छूट दे दी जाए तो वो अपनी मर्यादा भूल जाती हैं। "

सिया के मामले में भी उनका यही डर था फिर भी वो ज़िद करते हुए आगे बढ़ी। पढ़ी और अब आगे बढ़ने का सपना देख ही रही थी। इसी बीच बाबा के कोई दोस्त उसके लिए ये रिश्ता लेकर आ गये। माँ की भी 15 साल की उम्र में शादी हो गई थी, पिया की 20 साल में और अब सिया को भी शादी कर ही लेनी चाहिए। नहीं तो अच्छा वर नहीं मिलेगा। उफ्फ... ये सोच!

- " मौसी सिया कहाँ है?"
- "अरे वनिता आओ.. आओ...! देखो अब तुम ही उसको समझा सकती हो, पक्की सहली जो हो। अब बात के इतना आगे बढ़ जाने पर भी वो इस शादी से खुश नहीं है।"
- " पर वो है कहाँ पर?"
- " अपने कमरे में। जाओ मिल लो और बेटा जरा उसे समझाओ भी। जाओ ...जाओ..."

वनिता सिया के कमरे में जाकर देखती है कि सिया मुँह सुखाए बैठी है। जो आकर्षण उसके चेहरे में था, वो कहीं गुम हो गया था। उसका उतरा हुआ चेहरा उसकी मानसिक स्थिति को बयां कर रहा था। कोई देखे तो बोले कि लड़की को मायके छोड़ जाने का दुःख है पर उसके सपनों का यूँ ही टूट जाना किसीको दिखाई नहीं दे रहा था।

- " सिया मौसी क्या बोल रही है कि तू खुश नहीं है इस शादी से। पर लड़का तो अच्छा खानदानी है। गुड लुकिंग भी, फिर तकलीफ क्या है?"
- " तकलीफ की जड़ तो यह है कि मेरी बात कोई नहीं सुन रहा।"
- " क्या हुआ सिया, ऐसे क्यों बोल रही है? क्या तेरे लिए परिवार की खुशी मायने नहीं रखती।"
- " तू भी मज़ा ले रही है बनू। खुश कौन होगा पता नहीं पर दुःखी मैं ही रहूंगी। मेरा कुछ टूट जाएगा। "
- " हर कोई अपने हिस्से का दुःख भोग रहा है सिया। कहने को सब हँसते है पर किसके भीतर क्या चल रहा किसीको पता नहीं। "
- " मैं क्या करूँ फिर तू ही बता।" इतना कहते हुए सिया रोने लगी।
- " भाग जा।"

सिया वनिता को आश्चर्य से देखती रही।

- "ये क्या बोल रही है बनू। "

- " हाँ, अगर सपने प्यारे हैं तो भाग जा और सबको साबित कर के दिखा तू सही है। इतना कर सकती है तो तुझे अपने सपनों की उड़ान भरने से कोई नहीं रोक सकता। "

इतना कहकर वनिता चली गयी पर सिया को उलझन में डाल गई। अगली सुबह सिया को खोजा जा रहा था। सिया की माँ वनिता से पूछने भी आई थी। पर वो इस बात से अनजान थी कि सिया गई कहाँ, पर वो जानती थी वो अपनी उड़ान पूरी करने गई है।

वनिता सिया के कमरे में गई तो उसके टेबल पर एक खत पढ़ा हुआ मिला। उसने खत ले जाकर सिया के घर वालों को दे दिया। खत सिया का था।

"मां - बाबा मैं जा रही हूं। वापस आऊंगी। मुझे आत्मनिर्भर बनना है। बीती जिंदगी आप लोगों के सहारे बीत गई, अब बाकी जिंदगी उस अनजान लड़के के भरोसे नहीं बिता सकती। मैं खुद कमाना चाहती हूं। आप लोगों को खुश देखना चाहती हूं। मैंने उससे बात करने की कोशिश भी की थी, पर वह समझना ही नहीं चाहता। जो मुझे समझ ना सका वह मेरा साथ किस तरह दे सकता है। इसलिए अभी आप मेरी चिंता मत कीजिएगा, मैं अपनी एक सहेली के साथ दिल्ली जा रही हूं। वहाँ मुझे एक अच्छी नौकरी मिली है। दो साल के भीतर संपूर्ण परिवर्तन के साथ मैं फिर वापस आउंगी। मेरी जरूरत का सामान मैंने ले लिया है। मुझे माफ़ कर दीजियेगा कि मैंने आपको नाराज़ किया। आप मुझे बस अपना आशीर्वाद दे दीजिए।

आपकी बेटी सिया।"

सिया के बाबा बहुत नाराज़ हुये। सिया की माँ रो रो कर अफसोस कर रही थी कि उसने अपनी बेटी का साथ क्यों नहीं दिया। सिया की बहन को अभी भी कुछ समझ में नहीं आ रहा था। पर वनिता मन ही मन खुश थी कि चलो एक पक्षी अपने पिंजरे से बाहर तो निकला अपने सपनों की उड़ान पूरा करने के लिए।

पिंकी सिंह, भूतपूर्व

सुमन कब से रोये जा रही है, और अपनी माँ से एक ही बात का रट लगाये जा रही है कि -

- "माँ मत जाओ, माँ मत जाओ।"

पर माँ कर भी क्या सकती है। एक ओर मातृत्व तो दूसरी ओर कर्तव्य। मातृत्व छोड़ उसे कर्तव्य को प्राथमिकता देना ही होगा। वेसे तो माँ होना भी एक कर्तव्य ही है पर परिस्थिति के अनुसार कुछ दिन उसे इस कर्तव्य से दूर ही रहना होगा। इसी में सबकी भलाई है।

सुमन को ये बात अच्छी नहीं लगती थी कि उसकी माँ अब उससे दूर रहने लगी है। आते ही अपने आप को एक कमरे में बंद कर लेती है। न पापा से मिलती है न मुझ से। लगातार कई दिनों से ये सब देख देख कर उसके मन में एक तीव्र आंदोलन जन्म ले लिया है। पर वो कर भी क्या सकती है, सिवाय रोने के। उसके पास यही एक अस्त्र है, जिसको उसने आज प्रयोग करने का ठान लिया है।

ममता ने सुमन को इतना ज़िद करते देख अपने पास बुलाया। पर पास बैठाया नहीं। पास न रहते हुए उसने सुमन से पूछा -

- "क्या बात है! रोज़ तो जाती हूं, तो आज क्या हुआ ? "
- "कुछ नहीं बस तुम न जाया करो मुझे छोड़ कर" संकोच भरी आवाज से उसने कहा -
- "क्योँ, क्या हुआ?"

वेसे तो ममता नरमदिल की है पर परवरिश के मामले में सख्ती को वो ज्यादा महत्व देती है।

कुछ डगमगाते हुए सुमन ने कहा "माँ वो पड़ोस वाली आंटी बोल रही थी कि तेरी माँ हॉस्पिटल जाया करती है, ना जाने कितनी बीमारियों को अपने साथ लाया करती है। अगर तू भी हमारे घर आई तो वो वायरस कहीं हमें न हो जाए।"

कितनी छोटी सोच है इनकी, ममता मन ही मन सोचने लगी।

- " तो ठीक है तू उनके घर ना जाया कर, घर में खेला कर किट्टू और शेरा के साथ।"
- " पर माँ वो तो जानवर है, उनके साथ क्या खेलना!"
- "इंसानों के पास गया था ना, उन्होंने जो बोला वो अच्छा है क्या? उनसे अच्छे तो ये बेजुबान है।"
- "पर माँ बात सिर्फ ये नहीं बल्कि आप कई दिनों से पापा और मुझसे भी तो दूर रहने लगी हो। क्यों माँ?" उसकी आँखों में आंसू आ गए थे।
- "बेटा मुझे मरीजों का इलाज करने जाना पड़ता है। मैं उनके साथ रहती हूं। तुम नहीं जानते ये कितना खतरनाक वायरस है। मैं नहीं चाहूंगी कि मेरी वजह से तुम लोगों को कोई तकलीफ हो।"
- "माँ आप क्यों जाती हो। सरकार ने तो lockdown करके रखा है न, मिश्रा अंकल तो बाहर नहीं जाते। कोई नहीं जाता।"
- "वो लोग अपना कर्तव्य कर रहे हैं और मैं अपना।"

ममता ने कुछ रुक कर फिर कहा -

- "देखो बेटा हर इंसान का अपना कुछ दायित्व होता है, और उसका ये फ़र्ज़ है कि वो उसे ठीक से निभाये। लोगों की सुरक्षा की जिम्मेदारी सिर्फ हमारी नहीं सब की है। घर रहकर सब अपना काम कर रहे हैं और बाहर हॉस्पिटल जाकर मैं अपना कर रही हूँ।"
- " पर माँ मुझे अच्छा नहीं लगता कि आप मुझसे दूर रहो ।"
- "बेटा कुछ ही समय ही की तो बात है, फिर से सबकुछ नार्मल हो जाएगा। अब तुम्हें ये तो अच्छा नहीं लगेगा ना कि तुम्हारी माँ को कोई भगोड़ी कहे।"
- "वो क्या होता है?"
- "भगोड़ी मतलब जो अपने काम से, कर्तव्य से भाग जाते हैं। अब तुम्हें अगर अच्छा लगेगा कि तुम्हारी वजह से तुम्हारी माँ अपमान सहे तो ठीक है, नहीं जाती मैं।"

सुमन फिर कुछ नहीं बोली वो सीधे उठकर वहाँ से चली गई। उसकी छोटी सी बुद्धि में माँ के लिए चिंता के साथ साथ अपना भी स्वार्थ छिपा हुआ था। वो मन ही मन ये सोच रही थी कि अगर माँ नहीं गई तो मेरे दोस्त जिनके ऊपर मेरा दबदबा रहा है वो मेरा मज़ाक उड़ाएंगी। मेरे टीचर्स जो मुझे डॉक्टर की बेटी के रूप में जानते हैं वो मुझे भगोड़ी की बेटी कहेंगे। नहीं ऐसा नहीं हो सकता।

ममता जब हॉस्पिटल जाने के लिए दरवाजे की तरफ गई तो सुमन पहले ही वहाँ खड़ी हुई थी। ममता को देख के उसने अपने हाथों को आगे बढ़ाते हुए कहा

- "माँ लोगों की जिम्मेदारी लेने से पहले अपना ख्याल रखलो। और ये मास्क पहनलो। आपको हॉस्पिटल जाने से मैं अब नही रोकूंगी।"

9 साल की सुमन की बातें सुनकर ममता के होठों पर एक संतोष जनक मुस्कान छा गई।

- "मेरी बेटी अब बहुत समझदार हो गई है। देखो बेटा लोग क्या कहते हैं, क्या करते हैं इन सब बातों में हमें नहीं उलझना चाहिये। बस हमें अपना कर्तव्य का पालन करना है।"

ये कहकर ममता कार में बैठकर हॉस्पिटल की ओर चली गई। पीछे खड़ी सुमन उन्हें देखती रही और मुस्कुरा रही। क्योंकि उसने आज माँ को हॉस्पिटल भेज के अपने कर्तव्य का पालन किया है।

पिंकी सिंह, भूतपूर्व छात्रा

## संकट के बादल

संकट के बादल ऐसे आ जाएंगे
तीनों लोक में यूँ छाजाएंगे।
चारों तरफ कोहराम मचेगा।
कहीं आंसू बहेंगे,
तो कहीं भूखमरी होगी
संकट के बादल ऐसे आ जाएंगे,,,

बीमारी ने ऐसा विकराल रूप लिया है,
जिसका तोड़ न कोई कर पा रहा है।
इस बीमारी की आग में
कितने और जल जायेंगे,
कभी सोचा न था कि ऐसा दिन भी आयेगा
संकट के बादल ऐसे आ जायेंगे,,,

पूरी दुनिया वीरान पड़ जाएगी।
सड़क दुकानें, खाली हो जायेंगी
एक मनुष्य दूसरे से न मिल पायेगा,
ऐसा समय भी देखना पड़ जायेगा संकट के बादल ऐसे छा जायेगा,,,

बांगी हांसदा, +3 प्रथम वर्ष छात्रा

## लॉकडाउन

लॉक डाउन है, लॉक डाउन है,
मिलकर करोना को हराना है,
घर में रहकर ही समय गुजारें,
बाहर जाना मना है।

हाथ किसी से नहीं मिलाना है,
चहरे को हाथ नहीं लगाना है,
बार-बार अच्छे से हाथ धोना है,
मिलकर करोना को हराना है।

मंदिर, मस्जिद, चर्च नहीं जाना है,
यात्रा, भ्रमण, घुमना सब मना है,
दूरी बनाकर, हमको जीना है,
मिलकर करोना को हराना है।

संगीता प्रज्ञा, +3 प्रथम वर्ष

# कोरोना का प्रकोप

हुआ कुछ ऐसा कि सड़कों का
सफर सुनसान हो गया,
भीड़ भाड़ का इलाका भी
अब वीरान हो गया,
उड़ता हुआ परिंदा भी देख
मन हैरान हो गया,
कि उसे कैद करने वाला इंसान आज
खुद आजादी का मोताज हो गया,
रूह निकल रही है जिस्मों से
ये ऐसा वक्त है जो
इंसानियत के लिए हैवान हो गया,
अमीरों के घर के राशन का
इंतजाम मिनटों में हुआ,
तो मजदूरों का खतम
घर का सारा सामान हो गया,
ना जाने कैसी गलती हुई इस इंसान से,
के घरों में कैद सारा जहाँ हो गया,
नदी, नाले और आसमान का रंग साफ हो गया,
प्रकृती ने रचा ऐसा कुछ कि
उसके साथ आखिर इंसाफ हो गया ।

हाफिजा बेगम, +3 तृतीय वर्ष

# बेवजह

बेवजह घर से निकलने की जरूरत क्या है?
मौत से आँख मिलाने की जरूरत क्या है?
सबको मालूम है बाहर की हवा है कातिल,
यू ही कातिल से उलझने की जरूरत क्या है?
ये जिंदगी की पहली रेस होगी,
जिसमें रुकने वाला ही जीतेगा।

सस्मिता नाएक, +3 द्वितीय वर्ष

अगर हम ग्रामीण जीवन की बात करें, तो सबसे पहले यह प्रश्न उठता है कि, आखिर गाँव है क्या? तो जवाब यह मिलता है कि जब कुछ लोग एक समूह में या एक छोटे सी बस्ती में रहते हैं, उसे गाँव कहा जाता है। गाँव के लोग अपने जीवन यापन के लिए कृषि या अन्य कामों पर निर्भर करते हैं। इन गांवों में शहरों की अपेक्षा कम सुविधाएं और संसाधन उपलब्ध होते हैं।

## ★ भारतीय ग्राम:-

कहा जाता है कि 'भारत' गांवों का देश है, और सही भी यहीं है। अधिकतर लोग गाँव में वास करते हैं। भारत वासी अपने विकास के लिए भारतीय कृषि पर ही निर्भर करते है। 'सादा जीवन उच्च विचार' यही भारतीय ग्रामों की पहचान है। जब भी मन में भारतीय ग्राम का विचार आता है, तो खेतों में दूर - दूर तक लहलहाती हुई हरी फसलें, कड़ी धूप और खुले आसमान के नीचे काम करता किसान, घरों की बागडोर संभालती घर की स्त्रियों की छवि आखों के सामने आ जाती है।

पेड़ों की ताजी हवा, ताजा और शूद्ध दूध, रसायनों से मुक्त ताजी - ताजी सब्जियाँ आदि आज भी भारत वासियों को गाँव की और खींच ले जाती है। सभी ग्रामवासियों का हमेशा एक दूसरे के लिए लगाव, उनका एक दूसरे की मदद के लिए सदैव तत्पर रहना उनकी विशेषता है।

## ★ ग्रामीण जीवन की विशेषताएँ :

**◆. कृषि पर आधारित :-** भारतीय ग्रामीण लोग कृषि पर आधारित है, कृषि ही लोगों का प्रमुख व्यवसाय हैं। अगर कृषि कार्य न करेगे तो भूखे रह जाएगे। गाँव में रहने वाले लोग कुछ

अन्य व्यवसाय भी करते है, तो उनका व्यवसाय प्रत्यक्ष या अप्रत्यक्ष रूप से कृषि पर निर्भर रहता है।

◆**. जाति भेद :-** पुराने जमाने में लोगों के बीच जाति भेद बहुत था, लेकिन अभी जहाँ शहरों में जाति, समाज आदि को छोड़कर लोग आगे बड़ चुके है, वहीं गांवों में आज भी इन सब चीजों को महत्व दिया जाता है, जो की बहुत गलत है।

◆**.सादा जीवन :-** गाँव में आज भी लोग सादा जीवन व्यतीत करते हैं। जैसे शहरों में सब ब्रांड, फैशन के पीछे भागते हैं, लेकिन ये अब तक गांव की दहलीज को भी छू नहीं पाई है। आज भी गाँव में सब सादा जीवन और उच्च विचार में विश्वास रखते हैं।

◆**.गरीबी :-** जिस किसान की बदौलत हमें भोजन मिलता है, वह अपने लिये ढंग से दो वक्त की रोटी नहीं जुटा पाता। दुःख तो तब होता है, जब किसानों द्वारा पैदा किए गए अन्न को दूसरे लोग बेचकर मुनाफा कमाते हैं और किसान की स्थिति दयनीय बनी रहती है।

◆**. मंद गति से विकास :-** आज जहाँ शहरों में विकास की रफ्तार तेज होती जा रही है। वहीं गाँव के लोग मूल भूत सुविधाओं के लिए भी संघर्ष करने के लिए मजबूर है।

◆**. अशिक्षा :-** गाँवों की इस स्थिति का एक बहुत बड़ा कारण अशिक्षा भी कहा जाता है। गाँव के लोग आज भी शिक्षा को जरूरी नहीं समझते। अगर लोग शिक्षा को जरूरी समझे भी तो उन्हें सुविधा उपलब्ध नहीं होती।

आजकाल समय के साथ- साथ लोगों की धारणा बदल रही है। लोग गाँव से शहर की ओर पलायन कर रहे हैं। गाँव के लोग ग्रामीण असुविधाओं से तंग आकर शहरी सुविधाओं की ओर आकर्षित हो रहे हैं, क्योंकि गाँव में कुछ सुविधायें उपलब्ध नहीं है। इसलिए शहरों में अपना निवास बनाकर सुविधा तलाश रहे हैं, जिसका सामना ग्राम वासियों को करना पड़ता है। आइये देखते हैं ग्रामीण लोगों की कौनसी हैं समस्याएं।

## ★ ग्रामीण जीवन की समस्याएँ

◆**ग्रामीण असुविधाएँ :-** आज के समय में हर व्यक्ति अपनी - अपनी सुविधा चाहते है, और यह सत्य है कि गाँवो में शहरों की अपेक्षा सुविधाएं नाम मात्र की भी नहीं है। गाँवो में रहने वाले लोग अपनी हर एक जरुरत चाहे वह खेती हो या अन्य घर का कोई सामान आदि के लिए

शहरों पर निर्भर करते हैं। उन्हें अपनी हर छोटी से छोटी जरूरत के लिए शहर जाना पड़ता है, जिसमें उनका समय और पैसा दोनों बरबाद होता है।

◆**शिक्षा का आभाव :-** शिक्षा विकास का एक मात्र साधन है, जो कि गाँवों में मौजूद नहीं है। आज भी कई गांवों में स्कूल नहीं है और अगर स्कूल है भी तो उनमें शिक्षा का स्तर और व्यवस्था सही नहीं है। गांवों में रहने वाले बच्चों को स्कूल के लिए शहर की ओर जाना पड़ता है और अगर वे गाँव के स्कूल में शिक्षा ले भी लेते है, तो उच्च शिक्षा के लिए शहर जाना ही पड़ता है।

◆**विकास की धीमी रफ्तार :-** जो गाँव, शहर के किनारे या मुख्य राजमार्गों पर बसे हैं, उनका तो विकास हो गया है, परंतु जो गाँव शहरी सीमा से दूर हैं, वे अभी भी विकास की राह देख रहे हैं। कई गाँवों को तो अब तक मुख्य सड़कों से जोड़ा भी नहीं गया है। नेता और राजनीतिक पार्टियाँ केवल चुनाव के समय इन गाँव की ओर रुख करती हैं, और ग्राम वासियों के मन में नयी आस दे जाते हैं।

◆**परिवहन के साधनों का अभाव :-** गाँव के लोगों को परिवहन के लिए भी कई समस्याओं का सामना करना पड़ता है । बड़ी और फास्ट ट्रेनों के तो गाँव में स्टाप ही नही होते,ओर नही अछि और न ही सुविधा जनक बस होती है । कुछ ग्राम वासियों को तो एक बस के लिए दिनभर इंतजार करना पड़ता है, और इनमें कई सारे लोग सफर करते हैं, जिनके द्वारा हमे सफर करने के लिए असुविधा भी होती है ।

◆**स्वास्थ्य की सम्पूर्ण सुविधा उपलब्ध न होना :-** अधिकांश गाँवों में न कोई अस्तपताल है और न कोई अन्य सुविधा। अगर किसी गाँव में अस्पताल है भी तो वहाँ पर कोई अच्छे डॉक्टर नहीं है, जो अच्छे से इलाज कर सके। अगर किसी को परेशानी हो तो वह अपने गाँव में इलाज तो कर लेते हैं, लेकिन अच्छे नहीं होते हैं। इसलिए ग्रामवासी को अपनी छोटी से छोटी परेशानी के लिए शहर की ओर रुख करना पड़ता है।

◆**अवैधानिक तत्वों की मौजूदगी :-** आपको जानकर आश्चर्य होगा कि गाँव के लोग और बूढ़े सभी आज भी जुआ सट्टा ओर मादक पदार्थों की बिक्री खुले - आम करते हैं। यहाँ तक कि गाँव के बच्चे पढ़ाई न करके, इन सभी कि ओर आकर्षित हो जाते हैं, और फिर गलत आदतों के शिकार हो जाते हैं।

**◆भौतिक सुख सुविधाओं का अभाव :-** गाँव में शहरों की अपेक्षा सुख सुविधा के समान मौजूद नही होता । जैसे अगर ग्राम वासी खर्च करके फ्रिज, कूलर आदि खरीद भी ले,तो उन्हें बिजली सही समय पर उपलब्ध नहीं होती।

**◆मनोरंजन के साधनों का अभाव :-** गाँव में शहरों की तरह मनोरंजन के साधन जैसे सिनेमाघर, बगीचे आदि नहीं होते हैं। और अगर होते भी हैं तो बहुत दूर, जो सबकी पहुँच के बाहर होते हैं।

ऐसा नही है, कि गाँव में कोई लोग नहीं रहते। जहाँ गाँव में रहने वाले लोगों को कई समस्या का सामना करना पड़ता है, वहीं ग्रमीण जीवन के कई सारे फायदे भी हैं। जिस के कारण पुराने ग्रामीण लोग गाँव छोड़कर नहीं जाना चाहते हैं।

## ★ग्रामीण जीवन के लाभ/फायदे

**◆शुद्ध प्राकृतिक वातावरण :-** शहरों की अपेक्षा गाँव का वातावरण शुद्ध होता है। यहाँ तक कि शहरों में आज प्रदूषण बहुत होता है लेकिन गॉव में इतना नहीं होता। शहरों में बहुत सारे वाहन होते हैं, लेकिन गाँव में इतने सारे नहीं होते हैं अतः ना धुआँ होता है और ना ही ज्यादा शोर होता है। शहर के लोग कूलर, पंखे जैसे अप्रकृतिक वस्तुओं के भरोसे रहते हैं, लेकिन गांव के लोग शुद्ध हवा का आनंद उठाते हैं।

**◆शुद्ध रसायन मुक्त भोजन :-** गाँव के लोग खेती करते हैं, गाय, भैंस ओर बकरी पालते हैं। वे अपने लिए बिना रसायन का उपयोग किए अनाज, सब्जी आदि का प्रबंध कर सकते हैं। जहाँ हम लोग शहरों में पैकेट का दूध इस्तेमाल करते हैं, वहाँ गाँव में लोग गाय भैंसों का शुद्ध और ताजा दूध पीते हैं तथा घर पर ही दूध के अन्य पदार्थ बनाते हैं।

**◆ त्योहारों का सही आंनद :-** जब त्योहारों आते है, तब गाँव के लोग सब धूम - धाम से मनाते हैं, वहीं शहरों में लोग दिन भर की दौड़ धूप से तंग आकर त्योहारों का आनंद नहीं ले पाते हैं। सच तो यह है कि भारत में अब त्योहारों का अस्तित्व केवल गाँवों में शेष रह गया है।

**◆एक दूसरे की मदद के लिए सदैव तत्पर :-** गाँवों में आज भी लोगों के बीच प्यार है। वे कभी एक दूसरे से ना लड़ते हैं और ना कभी झगड़ते हैं। यहाँ सब एक दूसरे के साथ परिवार की तरह रहते हैं। और एक - दूसरे की सहायता के लिए हमेशा तत्पर रहते हैं।

**◆शहरी भागदौड़ से दूर सुकून की जिंदगी :-** जहाँ बड़े - बड़े शहरों में लोग भाग दौड़ से तंग आ चुके हैं, वहीं ग्रामीण जीवन अब भी सुकून से भरा हुआ है। यहाँ लोग दिन भर की मेहनत के बाद शाम में जल्दी खाना खाकर अपने आंगन में आराम करते हैं, अपनी दिन भर की बातें एक दूसरे को बताते हैं। वहीं शहरी लोग इन सब बातों से दूर दूर तक अजान है।

इन सब बिन्दुओं को पढ़कर यह निष्कर्ष निकाल पाना मुश्किल है कि गाँव का जीवन बहुत अच्छा है या बहुत बुरा। जैसे हर सिक्के कि दो पहलू होते हैं यही बात हम गाँवों के विषय में भी कह सकते हैं।

स्वाती भोल, +3 प्रथम वर्ष

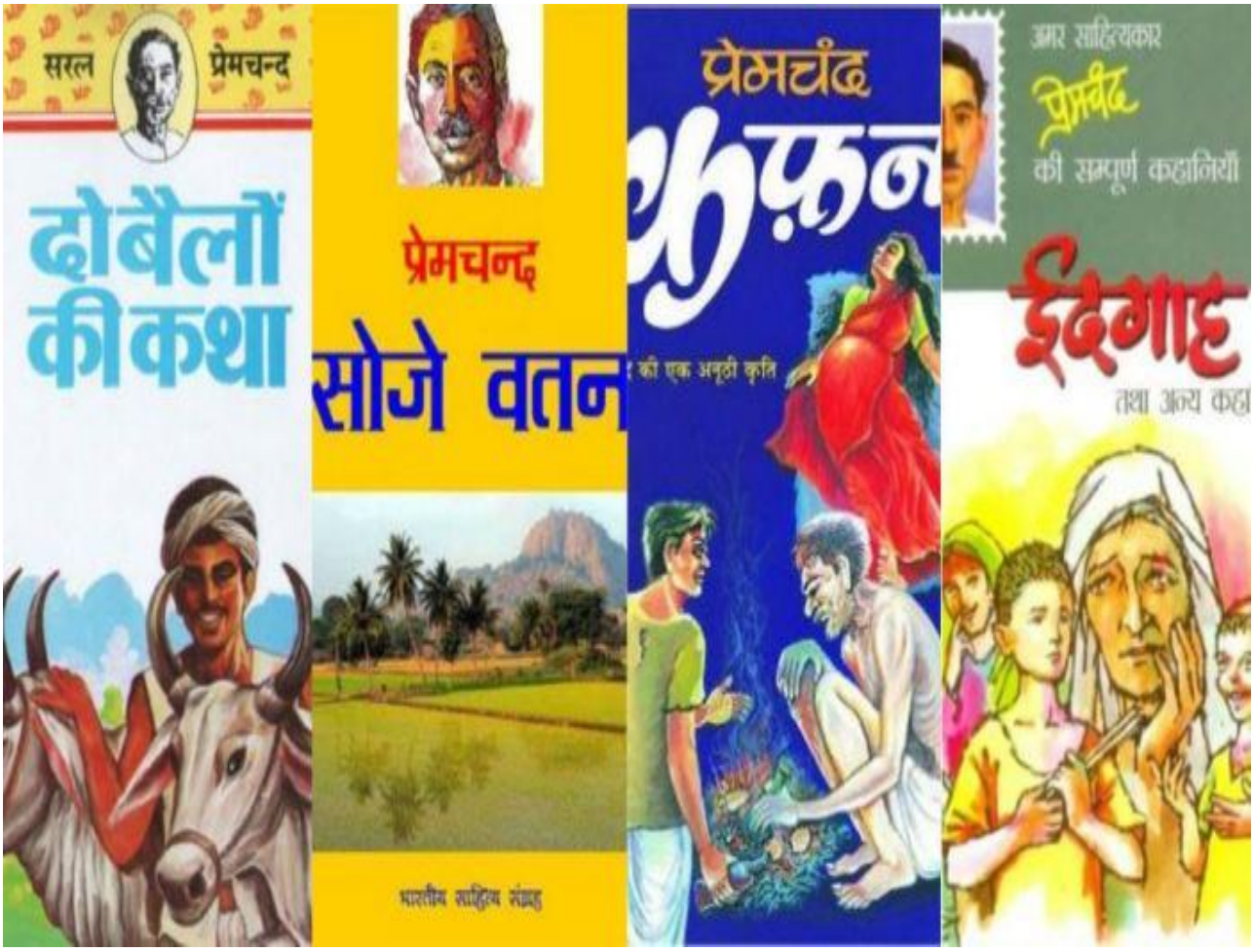

# मन की सुंदरता

रामगढ़ नाम का एक छोटा सा गांव था। उसी रामगढ़ में सीमा नाम की लड़की अपने माता-पिता के साथ रहती थी। उसके पिता एक किसान थे और उसकी माता घर पर ही रहती थी और घर के काम संभालती थी। सीमा 10 साल की थी उसका स्वभाव बड़ों के प्रति बहुत ही अच्छा था वह सभी का बहुत सम्मान करती थी जिसकी वजह से उसकी बहुत तारीफ भी होती थी, किंतु फिर भी सीमा बहुत उदास रहती थी। उसका आधा जला हुआ चेहरा उसे सताता था, क्योंकि उस जले हुए चेहरे के कारण वह कुरूप लगती थी।

जिसके कारण विद्यालय में उसके ज्यादा मित्र नहीं थे। सीमा को सारे बच्चे बहुत चिढ़ाते थे, मजाक उड़ाते थे। उसके चेहरे के कारण बच्चों के बीच वह खुद को बहुत अकेला महसूस करती थी। उसकी उदासी देखकर उसके माता-पिता भी दुःखी रहते थे। सीमा की माँ उससे हमेशा कहती थी कि - "बेटी सीमा सुंदरता मन से होती है चेहरे से नहीं, और तुम तो मन से बहुत सुंदर हो। बाहरी सुंदरता कभी मन की सुंदरता से बढ़कर नहीं होती।" इस बात पर सीमा अपनी मां से कहती है कि - "मां अगर मन इतना सुंदर है तो वह क्यों नहीं दिखाई देता?" वह मासूम सी बच्ची मां की बात समझ नहीं पाती थी कि माँ किस सुंदरता के बारे में बता रही है।

1 दिन सीमा की विद्यालय में एक जादूगर अपना खेल दिखाने आया और सभी बहुत खुश थे। उस जादूगर ने बहुत सारे जादू के करतब दिखाए। सभी बच्चे खुशी से खूब चिल्लाने और तालियां बजाने लगे और अंत में जादूगर ने अपने थैले से एक आईना निकाला और सभी बच्चों से कहा कि यह एक जादुई आईना है इसमें जो भी अपना चेहरा दिखेगा उसमें उसे अपना अलग ही रूप देखने को मिलेगा। यह सुनकर सभी बच्चे खुश हो गए और सभी एक-एक करके अपना चेहरा आईने के सामने देखने लगे। पहला बच्चा जब आईने के सामने आया तो उसने जैसे ही देखा अपना चेहरा तो मारे डर के वह चीख पड़ा। उस बच्चे का चेहरा बहुत ही डरावना दिख रहा था। उसके साथ साथ बाकी सभी बच्चों का चेहरा भी वैसा ही अजीबोगरीब डरावना दिखाई दे रहा था। तभी एक कोने में बैठी सीमा को उस जादूगर ने आगे बुलाया उसे भी चेहरा आईने के आगे दिखाने को कहा। सीमा पहले तो डर रही थी परंतु जैसे ही अपना चेहरा आईने के सामने दिया तो उसने देखा सामने जो आईने में प्रतिबिंब दिख रहा था, वह तो किसी सुंदर और बहुत ही प्यारी सी दिखने वाली परी का चेहरा था। सीमा उस आईने में सबसे ज्यादा सुंदर लग रही थी। सभी बच्चे यह देखकर बहुत ही चकित हो गये कि सीमा इतनी सुंदर कैसे लग सकती है। उसी वक्त जादूगर पास आता है और सीमा और बाकी सभी बच्चों से कहता है कि यह सुंदरता आप

सभी के मन की सुंदरता है ना कि बाहरी सुंदरता, जिसका गुण व्यवहार आचरण बहुत सुंदर होता है वही सही मायने में सुंदर होता है।

उस दिन सीमा को समझ में आ गया था कि मन की सुंदरता क्या होती है। सीमा को अपनी मां की कही हुई बात आज याद आ गई कि बाहरी सुंदरता का कोई मोल नहीं होता और मन की सुंदरता है सभी सुंदर चेहरों में से एक होता है।

उस दिन के बाद से सीमा कभी भी उदास नहीं रहती थी और उसके बहुत सारे दोस्त भी बन गए थे। सभी बच्चों ने सीमा से माफी मांगी और उससे दोस्ती कर कर ली।

दीप्ति स्मिता साहू, +3 प्रथम वर्ष

# आज का ज्ञान

आप एक पत्थर लीजिए और उसे कुत्ते को मारिये,
आप देखेंगे की कुत्ता डरकर भाग जाएगा।
अब फिर वही पत्थर लीजिए और उसे मधुमक्खी के छत्ते पर दे मारिये, फिर देखिएगा की आपका क्या हाल करती है मधुमखियां?
पत्थर वही है और आप भी वही है, बस फर्क इतना सा है कि कुत्ता अकेला था और मधुमखियां समूह में, एकजुटता, एकता में ही शक्ति है। अगर हम एकजुट नहीं हुए तो, ना तो हमारा देश विकास करेगा, ना ही हमारा अपना समाज और न हम।

संगीता प्रज्ञा, +3 प्रथम वर्ष

गर्मी के दिन थे। दो आदमी सुबह-सुबह आए और आम के पेड़ के नीचे सो गए। धूप पत्तों से छनकर उन दोनों तक पहुंच रही थी। फिर भी वे नहीं उठे, वही पड़े रहे। उन दोनों के बीच में एक पका आम टपक कर गिरा। वह सुनहरे रंग का पका हुआ रसीला आम था। एक ने दूसरे से कहा -

“जरा यह आम उठा कर मेरे मुंह में डाल दो, देखूं तो कैसा है।“

दूसरे ने जवाब दिया - “अरे कैसे उठूं, मेरे मुंह पर मख्खी बैठी है, मैं उठ नहीं सकता। पहले इसे उड़ने तो दो फिर मैं उठूंगा।“

उधर से एक ऊंट वाला जा रहा था। उन दोनों में से एक आलसी ने उस ऊंट वाले को पुकारा -

“अरे ओ ऊंट वाले भाई साहब जरा इधर आना।“

वो ऊंट वाला उन दोनों के पास आया और बोला -

“क्या बात है भाई?”

तो उन दोनों में से एक ने कहा -

“अरे भाई यह आम जरा उठाकर मेरे मुँह में डाल दो।“

यह सुनते ही वो ऊंट वाला गुस्से में आग बबूला हो गया और उसने उस व्यक्ति से कहा -

“अच्छा तो इसलिए तुमने मुझे इतनी दूर से बुलाया था। बगल में पड़ा आम भी तुमसे उठाया नहीं जाता? बड़े आलसी जान पड़ते हो तुम। अरे भाई आलसी की मदद तो भगवान भी नहीं करता।“

ऊंट वाले की बात सुनकर उस आलसी व्यक्ति ने उससे कहा -

“और तुम भी क्या कमाल के हो, जो इतनी दूर आकर एक आम उठाकर नहीं दे पा रहे हो।“

उन दोनों की बात सुनकर ऊंट वाला फिर बोला -

“जो हाथ पैर होकर अपने काम नहीं करता उसका भला भगवान भी नहीं करता।“

यह कहकर ऊंट वाला वहां से चला गया। ऊंट वाले के जाने के बाद दोनों ने आम को उठाया ही नहीं। दोनों के बीच आम ऐसे ही पड़ा रहा। दोनों लोगों का रास्ता देखने लगे कि कोई तो आयेगा और उनके मुँह में आम डालेगा। बहुत लोग वहां से गुजरे परंतु किसी ने भी उनकी मदद नहीं की, और दोनों आलसी हूं वहां यूं ही पड़े रह गए।

'हाथ पाँव सही होने के बावजूद जो व्यक्ति स्वयं अपने कार्य नहीं करते, उसकी तो भगवान भी मदद नहीं करते हैं।'

स्वागतिका, +3प्रथम वर्ष

# मां की प्यारी सीख

निशा अपनी मां के साथ एक बहुत अच्छे घर में रहती थी। निशा बहुत अच्छी लड़की थी और हमेशा अपनी मां का कहना मानती थी। निशा की मां बहुत अच्छे पकवान बनाती थी। निशा को अपनी मां के हाथ से बना खाना बहुत पसंद था।

एक दिन निशा की माँ ने बहुत बढ़िया लड्डू बनाकर एक बड़े से जार में रख दिया, और फिर बाजार चली गई। बाजार जाने से पहले निशा को उसकी मां ने कह दिया था, कि वह अपना होमवर्क करने के बाद लड्डू खा सकती है। निशा बहुत खुश हो गई। उसने जल्दी से अपना होमवर्क पूरा करके अपनी मां के लौटने से पहले ही लड्डू खाना चाहती थी। इसलिए वह एक स्टूल पर चढ़ गई, और जार के अंदर हाथ डालकर ढ़ेर सारे लड्डू निकालने की कोशिश की, पर जार का मुंह छोटा होने के कारण निशा अपना हाथ बाहर नहीं निकाल पाई, जिसके कारण वह बहुत घबरा गई और रोने लगी।

उसी समय उसकी मां बाजार से लौट आई। जब उन्होंने निशा को देखा तो वे हंसने लगी और अपनी बेटी निशा से कहा - "निशा हाथ से ढ़ेर सारे लड्डू छोड़कर केवल दो या तीन लड्डू पकड़ कर हाथ बाहर निकालो।" मां की बात मान कर जब उसने सिर्फ दो लड्डू हाथ में लिए तब वह आसानी से अपना हाथ बाहर निकाल पाई। तब उसकी मां ने प्यार से कहा - "ऐसा करने से तुमने क्या सीखा?"

निशा ने कहा मैंने सीखा है, कि "किसी भी चीज का ज्यादा लालच अच्छी बात नहीं है। हमें हर चीज उतनी ही लेनी चाहिए जितने की हमें जरूरत हो।"

दीप्ति स्मिता साहू, +3प्रथम वर्ष

# खूब लड़ी मर्दानी वो तो झाँसी वाली रानी थी

सिंहासन हिल उठे राजवंषों ने भृकुटी तनी थी,
बूढ़े भारत में आई फिर से नयी जवानी थी,
गुमी हुई आज़ादी की कीमत सबने पहचानी थी,
दूर फिरंगी को करने की सब ने मन में ठनी थी।
चमक उठी सन सत्तावन में, यह तलवार पुरानी थी,
बुंदेले हरबोलों के मुँह हमने सुनी कहानी थी,
खूब लड़ी मर्दानी वो तो झाँसी वाली रानी थी।

कानपुर के नाना की मुह बोली बहन छबिली थी,
लक्ष्मीबाई नाम, पिता की वो संतान अकेली थी,
नाना के सँग पढ़ती थी वो नाना के सँग खेली थी
बरछी, ढाल, कृपाण, कटारी, उसकी यही सहेली थी।
वीर शिवाजी की गाथाएँ उसकी याद ज़बानी थी,
बुंदेले हरबोलों के मुँह हमने सुनी कहानी थी,
खूब लड़ी मर्दानी वो तो झाँसी वाली रानी थी।

लक्ष्मी थी या दुर्गा थी वो स्वयं वीरता की अवतार,
देख मराठे पुलकित होते उसकी तलवारों के वार,
नकली युध-व्यूह की रचना और खेलना खूब शिकार,
सैन्य घेरना, दुर्ग तोड़ना यह थे उसके प्रिय खिलवाड़।
महाराष्ट्रा-कुल-देवी उसकी भी आराध्या भवानी थी,
बुंदेले हरबोलों के मुँह हमने सुनी कहानी थी,
खूब लड़ी मर्दानी वो तो झाँसी वाली रानी थी।

हुई वीरता की वैभव के साथ सगाई झाँसी में,
ब्याह हुआ बन आई रानी लक्ष्मी बाई झाँसी में,
राजमहल में बाजी बधाई खुशियाँ छायी झाँसी में,
सुघत बुंडेलों की विरूदावली-सी वो आई झाँसी में।
चित्रा ने अर्जुन को पाया, शिव से मिली भवानी थी,
बुंदेले हरबोलों के मुँह हमने सुनी कहानी थी,
खूब लड़ी मर्दानी वो तो झाँसी वाली रानी थी।

उदित हुआ सौभाग्या, मुदित महलों में उजियली च्छाई,
किंतु कालगती चुपके-चुपके काली घटा घेर लाई,
तीर चलाने वाले कर में उसे चूड़ियाँ कब भाई,
रानी विधवा हुई है, विधि को भी नहीं दया आई।
निसंतान मारे राजाजी, रानी शोक-सामानी थी,
बुंदेले हरबोलों के मुँह हमने सुनी कहानी थी,
खूब लड़ी मर्दानी वो तो झाँसी वाली रानी थी।

बुझा दीप झाँसी का तब डॅल्ल्यूसियी मान में हरसाया,
ऱाज्य हड़प करने का यह उसने अच्छा अवसर पाया,
फ़ौरन फौज भेज दुर्ग पर अपना झंडा फेहराया,
लावारिस का वारिस बनकर ब्रिटिश राज झाँसी आया।
अश्रुपुर्णा रानी ने देखा झाँसी हुई वीरानी थी,
बुंदेले हरबोलों के मुँह हमने सुनी कहानी थी,
खूब लड़ी मर्दानी वो तो झाँसी वाली रानी थी।

अनुनय विनय नहीं सुनती है, विकट शासकों की मॅयैया,
व्यापारी बन दया चाहता था जब वा भारत आया,
डल्हौसि ने पैर पसारे, अब तो पलट गयी काया
राजाओं नव्वाबों को भी उसने पैरों ठुकराया।
रानी दासी बनी, बनी यह दासी अब महारानी थी,
बुंदेले हरबोलों के मुँह हमने सुनी कहानी थी,
खूब लड़ी मर्दानी वो तो झाँसी वाली रानी थी।

छीनी राजधानी दिल्ली की, लखनऊ छीना बातों-बात,
क़ैद पेशवा था बिठुर में, हुआ नागपुर का भी घाट,
ऊदैपुर, तंजोर, सतारा, कर्नाटक की कौन बिसात?
जबकि सिंध, पंजाब ब्रह्म पर अभी हुआ था वज्र-निपात।
बंगाले, मद्रास आदि की भी तो वही कहानी थी,
बुंदेले हरबोलों के मुँह हमने सुनी कहानी थी,
खूब लड़ी मर्दानी वो तो झाँसी वाली रानी थी।

रानी रोई रनवासों में, बेगम गुम सी थी बेज़ार,
उनके गहने कपड़े बिकते थे कलकत्ते के बाज़ार,
सरे आम नीलाम छपते थे अँग्रेज़ों के अख़बार,
"नागपुर के ज़ेवर ले लो, लखनऊ के लो नौलख हार"।
यों पर्दे की इज़्ज़त परदेसी के हाथ बीकानी थी
बुंदेले हरबोलों के मुँह हमने सुनी कहानी थी,
खूब लड़ी मर्दानी वो तो झाँसी वाली रानी थी।

कुटियों में भी विषम वेदना, महलों में आहत अपमान,
वीर सैनिकों के मान में था अपने पुरखों का अभिमान,
नाना धूंधूपंत पेशवा जूटा रहा था सब सामान,
बहिन छबीली ने रण-चंडी का कर दिया प्रकट आहवान।
हुआ यज्ञा प्रारंभ उन्हे तो सोई ज्योति जगानी थी,
बुंदेले हरबोलों के मुँह हमने सुनी कहानी थी,
खूब लड़ी मर्दानी वो तो झाँसी वाली रानी थी।

महलों ने दी आग, झोंपड़ी ने ज्वाला सुलगाई थी,
यह स्वतंत्रता की चिंगारी अंतरतम से आई थी,
झाँसी चेती, दिल्ली चेती, लखनऊ लपटें छाई थी,
मेरठ, कानपुर, पटना ने भारी धूम मचाई थी,
जबलपुर, कोल्हापुर, में भी कुछ हलचल उकसानी थी,
बुंदेले हरबोलों के मुँह हमने सुनी कहानी थी,
खूब लड़ी मर्दानी वो तो झाँसी वाली रानी थी।

इस स्वतंत्रता महायज्ञ में काई वीरवर आए काम,
नाना धूंधूपंत, तांतिया, चतुर अज़ीमुल्ला सरनाम,
अहमदशाह मौलवी, ठाकुर कुंवर सिंह, सैनिक अभिराम,
भारत के इतिहास गगन में अमर रहेंगे जिनके नाम।
लेकिन आज जुर्म कहलाती उनकी जो क़ुर्बानी थी,
बुंदेले हरबोलों के मुँह हमने सुनी कहानी थी,
खूब लड़ी मर्दानी वो तो झाँसी वाली रानी थी।

इनकी गाथा छोड़, चले हम झाँसी के मैदानों में,
जहाँ खड़ी है लक्ष्मीबाई मर्द बनी मर्दनों में,
लेफ्टिनेंट वॉकर आ पहुँचा, आगे बड़ा जवानों में,
रानी ने तलवार खींच ली, हुआ द्वंद्ध आसमानों में।
ज़ख़्मी होकर वॉकर भागा, उसे अजब हैरानी थी,
बुंदेले हरबोलों के मुँह हमने सुनी कहानी थी,
खूब लड़ी मर्दानी वो तो झाँसी वाली रानी थी।

रानी बढ़ी कालपी आई, कर सौ मील निरंतर पार,
घोड़ा थक कर गिरा भूमि पर, गया स्वर्ग तत्काल सिधार,
यमुना तट पर अँग्रेज़ों ने फिर खाई रानी से हार,
विजयी रानी आगे चल दी, किया ग्वालियर पर अधिकार।
अँग्रेज़ों के मित्र सिंधिया ने छोड़ी राजधानी थी,
बुंदेले हरबोलों के मुँह हमने सुनी कहानी थी,
खूब लड़ी मर्दानी वो तो झाँसी वाली रानी थी।

विजय मिली, पर अँग्रेज़ों की फिर सेना घिर आई थी,
अबके जनरल स्मिथ सम्मुख था, उसने मुंहकी खाई थी,
काना और मंदरा सखियाँ रानी के संग आई थी,
यूद्ध क्षेत्र में ऊन दोनो ने भारी मार मचाई थी।
पर पीछे ह्यूरोज़ आ गया, हाय! घिरी अब रानी थी,
बुंदेले हरबोलों के मुँह हमने सुनी कहानी थी,
खूब लड़ी मर्दानी वो तो झाँसी वाली रानी थी।

तो भी रानी मार काट कर चलती बनी सैन्य के पार,
किंतु सामने नाला आया, था वो संकट विषम अपार,
घोड़ा अड़ा, नया घोड़ा था, इतने में आ गये अवार,
रानी एक, शत्रु बहुतेरे, होने लगे वार-पर-वार।
घायल होकर गिरी सिंहनी, उसे वीर गति पानी थी,
बुंदेले हरबोलों के मुँह हमने सुनी कहानी थी,
खूब लड़ी मर्दानी वो तो झाँसी वाली रानी थी।

रानी गयी सिधार चिता अब उसकी दिव्य सवारी थी,
मिला तेज से तेज, तेज की वो सच्ची अधिकारी थी,
अभी उम्र कुल तेईस की थी, मनुज नहीं अवतारी थी,
हमको जीवित करने आई बन स्वतंत्रता-नारी थी,
दिखा गयी पथ, सीखा गयी हमको जो सीख सिखानी थी,
बुंदेले हरबोलों के मुँह हमने सुनी कहानी थी,
खूब लड़ी मर्दानी वो तो झाँसी वाली रानी थी।

जाओ रानी याद रखेंगे ये कृतज्ञ भारतवासी,यह तेरा
बलिदान जागावेगा स्वतंत्रता अविनासी,
होवे चुप इतिहास, लगे सच्चाई को चाहे फाँसी,
हो मदमाती विजय, मिटा दे गोलों से चाहे झाँसी।
तेरा स्मारक तू ही होगी, तू खुद अमिट निशानी थी,
बुंदेले हरबोलों के मुँह हमने सुनी कहानी थी,
खूब लड़ी मर्दानी वो तो झाँसी वाली रानी थी।

**~सुभद्रा कुमारी चौहान**

संगृहित - राजनंदनी पांडे, +3 प्रथम वर्ष

## काश लौट आते वे बीते पल

काश लौट आते वे बीते पल
जहां बचपन और चंचल मन जहां था,
छोटा आंगन और दोस्तों का संगम
कभी तितलियों के पीछे भागना
तो कभी बारिश के पानी में नाव चलाना
कितने अनमोल होते हैं, वे बीते कल
काश लौट आते वह बीते पल।

बीते हुए कल को संजो रखा है मैंने
यादों के धागों से पिरोया है, मैंने
बहुत कुछ बदल गया है
कल में और आज में
कल सब साथ थे, पास थे
आज पास हैं, पर साथ नहीं
खोये हैं सब मोबाइल की डिबिया में।

आज की खुशियों में कल जैसी रौनक कहां?
कल सब साथ मैदानों में खेला करते थे
आज ना वो मैदान हैं ना वो खेल,
इसलिए सोचती हूं हर पल
काश लौट आते वो बीते बीते पल।

स्वागतिका, +3 प्रथम वर्ष

# भोला बचपन

क्या दिन थे जब हम छोटे थे।
छोटी सी बात पर लड़ते थे,
बड़ी बड़ी बातें भूला देते थे।
मौज मस्ती में दिन बीतते थे
क्या दिन थे जब हम छोटे थे।

हर पल में खुशियों का खजाना था
एक वो बचपन का जमाना था
ना रात का ठिकाना ना दिन की कोई खबर
स्कूल ना जाने के कई बहाने थे,
क्या दिन थे जब हम छोटे थे।

खेल कर कीचड़ से आते थे
खूब पिटाई होती थी घर पर,
फिर भी कीचड़ में हर बार खिलते थे।
मां के आँचल के साये में रहते थे ,
क्या दिन थे जब हम छोटे थे।

पूजा डाकुआ, +3 प्रथम वर्ष

# दिल में वतन

आंखें नम और दिल में वतन

सरहद पर तेरे नमन है,
आंखें नम है और दिल में वतन है!

दुश्मनों ने है आतंक मचाया,
पर वीर ना कभी घबराया!
कुछ कायर ने तुमको धमकाया,
उसका उत्तर भी अच्छे से पाया!
जितना बोलूं मैं उतना ही कम है,
आंखें नम है और दिल में वतन है.....

रुखा सुखा है तुमने खाया,
रात जागकर हमें है सुलाया!
सीना छलनी हुआ गोलियों से,
फिर भी हिंद का नारा लगाया!
तेरी यादों में डूबा वतन है,
आंखें नम है और दिल में वतन है.....!!

राजनंदिनी पाण्डे, +3 प्रथम वर्ष

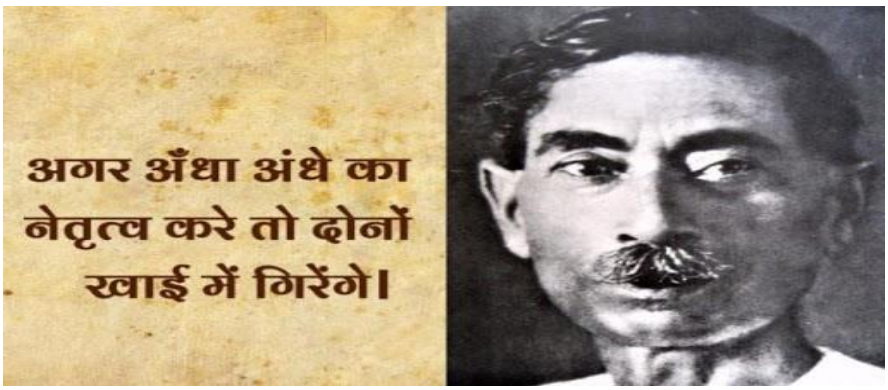

# लड़ाई

पढ़ने की मुझे मनाही है, सो पढ़ना है
मुझ में भी कुछ करने की आस है, सो पढ़ना है
सपनों ने ली अंगड़ाई है, सो पढ़ना है
हर कठिनाई से लड़ना है, सो पढ़ना है
क्योंकि मैं लड़की हूं, सो मुझे पढ़ना है।

मुझे नहीं भटकना है, सो मुझे पढ़ना है
आकाश में ऊँची उड़ान भरनी है, सो पढ़ना है
लड़खड़ाते पांव को मजबूत करना है, सो पढ़ना है
एक बार खुल कर जीना है, सो मुझे पढ़ना है
मुझे सारी दुनिया से लड़ना है, सो मुझे पढ़ना है
बंधन तोड़ आगे बढ़ना है, सो मुझे पढ़ना है
क्योंकि मैं लड़की हूं इसीलिये मुझे पढ़ना है।

जख्मों के दाग़ मिटाने है, सो मुझे पढ़ना है
नाइंसाफी का बदला लेना है, मुझे कानून गढ़ना है
अंधेरी कोठरी में रौशनी भरनी है, सो मुझे पढ़ना है
सफलता की चोटी पर चढ़ना है, सो मुझे पढ़ना है
सदियों का लेखा मिटाना है और, सो मुझे पढ़ना है
मुझे सब कुछ ही तो बदलना है
इसीलिये तो मुझे पढ़ना है।

# तुम और मैं

तुम तुम हो...
और मैं मैं हूं...
तुम ओस हो तो मैं बूंद हूं
जिन्दगी के सफ़र में यूं ही मिलें हम
जिस राह जिन्दगी ले गई बस चल दिए

और फिर ना जाने कब
एक दूजे में मिलकर
एक रंग में ढ़ल गये
ना जाने कब फिर पानी का
एक अंश बन गये
उसी तरह कब सागर में समा गये

हां
तुम और मैं
ना जाने कब से एक हो गये।

शरीफा शरवानी, +3 तृतीय वर्ष

# आत्महत्या : जीवन से पलायन

आत्महत्या शब्द जीवन से पलायन का डरावना सत्य है। जो व्यक्ति आत्महत्या का शिकार होते हैं, वे जीवन को पूरी तरह जी नहीं पाते। आत्महत्या एक ऐसा सत्य है जो दिल को दहला देता है। कभी कोई विद्यार्थी, किसी का पती, किसी की पत्नी, व्यापारी, किसान, कोई अभिनेता या अभिनेत्री, कोई सरकारी कर्मचारी तो कभी कोई प्रेमी जीवन में समस्याओं से इतना घिरा हुआ महसूस करता है कि नाउम्मीद हो जाता हैं। समस्याओं से जूझते जूझते जीवन से पलायन कर जाना ही उनको सहज प्रतीत होता है।

समस्याओं की उपज तथा दर्द निवारण की विधि सहनशक्ति है ना कि आत्महत्या। आत्महत्या भी एक समस्या है, यही कारण है विश्व में हर 40 सेकंड में एक व्यक्ति आत्महत्या करता है। इस तरह वर्ष में आठ लाख से अधिक लोग मर जाते हैं। यह कहा जाता है कि आत्महत्या पन्द्रह से उनतीस वर्ष की अवस्था के युवाओं के बीच मृत्यु का दूसरा प्रमुख कारण है, पर असल में तो आत्महत्या करने की कोई आयु नहीं है क्योंकि अब की बात करें तो तीस साल से अधिक उम्र के व्यक्ति ही सर्वाधिक आत्महत्या करते हैं।

आत्महत्या की समस्या दिन पर दिन विकराल होती जा रही है। इधर विज्ञान की प्रगति के साथ जहाँ बीमारियों से होने वाली मृत्यु संख्या कम हुई है, वहीं इस वैज्ञानिक प्रगति के बीच आत्महत्याओं की संख्या पहले से अधिक हो गई है। प्रश्न यह है कि क्यों आज की युवा पीढ़ी हर समस्या का निवारण आत्महत्या ही निकलती है?

चिंता की बात यह कि आज के सुविधा भोगी जीवन ने तनाव, अवसाद, असंतुलन को बढ़ावा दिया है, जब सुविधावादी मनोवृत्ति सिर पर सवार होती है और उन्हें पूरा करने के लिए साधन नहीं जुटा पाते हैं तब कुंठित एवं तनावग्रस्त व्यक्ति को अंतिम समाधान आत्महत्या ही दिखती है। यह केवल भारत की समस्या नहीं है, यह विदेशों में भी दिखाई देता है जहाँ लगभग 80-90 प्रतिशत किशोर किशोरियां तनावग्रस्त हैं जिनका डॉक्टरी इलाज चल रहा है। तकनीकी विकास ने मनुष्य को सुविधाएं तो दीं लेकिन उससे उसकी मानवीयता और संतुलन छीन लिया। प्रश्न है कि लोग दूसरा रास्ता क्यों नहीं अपनाते? आत्महत्या ही क्यों करते हैं?

भारत में आत्महत्या के प्रमुख कारणों में बेरोजगारी, पारिवारिक कलह, दाम्पत्य जीवन में संघर्ष, गरीबी, मानसिक विकार, परीक्षा में असफलता, प्रेम में असफलता, आर्थिक विवाद, राजनैतिक परिस्थितियाँ आदि होती हैं। स्त्रियों की अपेक्षा पुरुष अधिक आत्महत्या करते हैं।

आत्महत्या की बढ़ती घटनाओं को रोकना एक आदर्श एवं संतुलित समाज का आधार होना चाहिए। विश्व स्तर पर आयोजित होने वाले विश्व आत्महत्या रोकथाम दिवस की सार्थकता तभी है जब इस दिशा में कुछ ठोस उपक्रम हो। संपर्क, संवाद और देखभाल ये तीन शब्द ही आत्महत्या की रोकथाम का मूलमंत्र हो सकते हैं।

फ्रांसिस थॉमसन ने कहा है "अपने चरित्र में सुधार करने का प्रयास करते हुए, इस बात को समझें कि क्या काम आपके बूते का है और क्या आपके बूते से बाहर है।" आज ज्यों ज्यों विकास के नए कीर्तिमान स्थापित हो रहे हैं, त्यों त्यों आदर्श धूल-धूसरित हो रहे हैं और मनुष्य आत्महन्ता होता रहा है।

लिज़ा मिश्रा, भूतपूर्व छात्रा

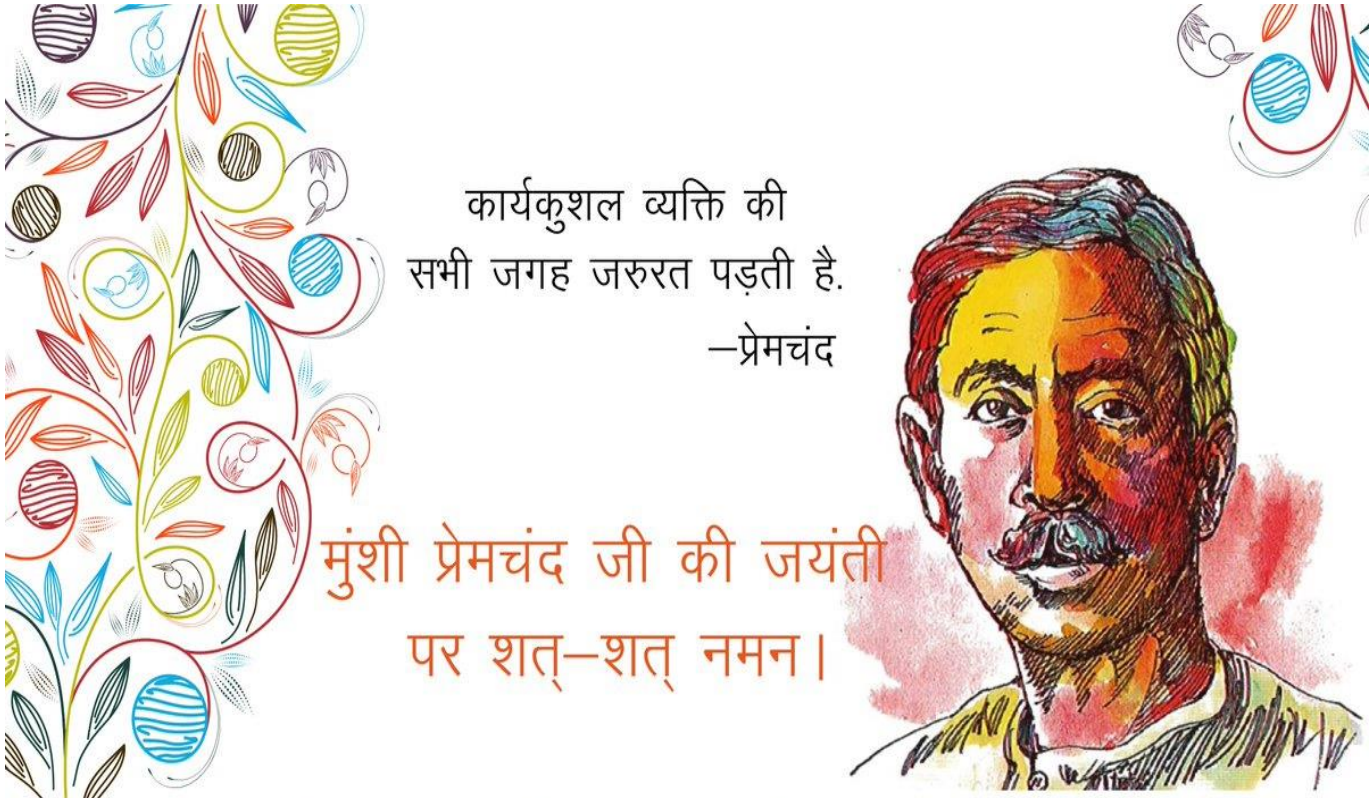

# बड़े घर की बेटी

बेनीमाधव सिंह गौरीपुर गाँव के जमींदार और नम्बरदार थे। उनके पितामह किसी समय बड़े धन-धान्य संपन्न थे। गाँव का पक्का तालाब और मंदिर जिनकी अब मरम्मत भी मुश्किल थी, उन्हीं के कीर्ति-स्तंभ थे। कहते हैं इस दरवाजे पर हाथी झूमता था, अब उसकी जगह एक बूढ़ी भैंस थी, जिसके शरीर में अस्थि-पंजर के सिवा और कुछ शेष न रहा था; पर दूध शायद बहुत देती थी; क्योंकि एक न एक आदमी हाँड़ी लिए उसके सिर पर सवार ही रहता था। बेनीमाधव सिंह अपनी आधी से अधिक संपत्ति वकीलों को भेंट कर चुके थे। उनकी वर्तमान आय एक हजार रुपये वार्षिक से अधिक न थी। ठाकुर साहब के दो बेटे थे। बड़े का नाम श्रीकंठ सिंह था। उसने बहुत दिनों के परिश्रम और उद्योग के बाद बी.ए. की डिग्री प्राप्त की थी। अब एक दफ्तर में नौकर था।

छोटा लड़का लाल-बिहारी सिंह दोहरे बदन का, सजीला जवान था। भरा हुआ मुखड़ा,चौड़ी छाती। भैंस का दो सेर ताजा दूध वह उठ कर सबेरे पी जाता था। श्रीकंठ सिंह की दशा बिलकुल विपरीत थी। इन नेत्रप्रिय गुणों को उन्होंने बी०ए०-इन्हीं दो अक्षरों पर न्योछावर कर दिया था। इन दो अक्षरों ने उनके शरीर को निर्बल और चेहरे को कांतिहीन बना दिया था। इसी से वैद्यक ग्रंथों पर उनका विशेष प्रेम था। आयुर्वेदिक औषधियों पर उनका अधिक विश्वास था। शाम-सबेरे उनके कमरे से प्राय: खरल की सुरीली कर्णमधुर ध्वनि सुनायी दिया करती थी। लाहौर और कलकत्ते के वैद्यों से बड़ी लिखा-पढ़ी रहती थी।

श्रीकंठ इस अँगरेजी डिग्री के अधिपति होने पर भी अँगरेजी सामाजिक प्रथाओं के विशेष प्रेमी न थे; बल्कि वह बहुधा बड़े जोर से उसकी निंदा और तिरस्कार किया करते थे। इसी से गाँव में उनका बड़ा सम्मान था। दशहरे के दिनों में वह बड़े उत्साह से रामलीला होते और स्वयं किसी न किसी पात्र का पार्ट लेते थे। गौरीपुर में रामलीला के वही जन्मदाता थे। प्राचीन हिंदू सभ्यता का गुणगान उनकी धार्मिकता का प्रधान अंग था। सम्मिलित कुटुम्ब के तो वह एक-मात्र उपासक थे। आज-कल स्त्रियों को कुटुम्ब को कुटुम्ब में मिल-जुल कर रहने की जो अरुचि होती है, उसे वह जाति और देश दोनों के लिए हानिकारक समझते थे। यही कारण था कि गाँव की ललनाएँ उनकी निंदक थीं ! कोई-कोई तो उन्हें अपना शत्रु समझने में भी संकोच न करती थीं ! स्वयं उनकी पत्नी को ही इस विषय में उनसे विरोध था। यह इसलिए नहीं कि उसे अपने सास-ससुर, देवर या जेठ आदि घृणा थी; बल्कि उसका विचार था कि यदि बहुत कुछ सहने और तरह

देने पर भी परिवार के साथ निर्वाह न हो सके, तो आये-दिन की कलह से जीवन को नष्ट करने की अपेक्षा यही उत्तम है कि अपनी खिचड़ी अलग पकायी जाय।

आनंदी एक बड़े उच्च कुल की लड़की थी। उसके बाप एक छोटी-सी रियासत के ताल्लुकेदार थे। विशाल भवन, एक हाथी, तीन कुत्ते, बाज, बहरी-शिकरे, झाड़-फानूस, आनरेरी मजिस्ट्रेट और ऋण, जो एक प्रतिष्ठित ताल्लुकेदार के भोग्य पदार्थ हैं, सभी यहाँ विद्यमान थे। नाम था भूपसिंह। बड़े उदार-चित्त और प्रतिभाशाली पुरुष थे; पर दुर्भाग्य से लड़का एक भी न था। सात लड़कियाँ हुईं और दैवयोग से सब की सब जीवित रहीं। पहली उमंग में तो उन्होंने तीन ब्याह दिल खोलकर किये; पर पंद्रह-बीस हजार रुपयों का कर्ज सिर पर हो गया, तो आँखें खुलीं, हाथ समेट लिया। आनंदी चौथी लड़की थी। वह अपनी सब बहनों से अधिक रूपवती और गुणवती थी। इससे ठाकुर भूपसिंह उसे बहुत प्यार करते थे। सुन्दर संतान को कदाचित् उसके माता-पिता भी अधिक चाहते हैं।

ठाकुर साहब बड़े धर्म-संकट में थे कि इसका विवाह कहाँ करें? न तो यही चाहते थे कि ऋण का बोझ बढ़े और न यही स्वीकार था कि उसे अपने को भाग्यहीन समझना पड़े। एक दिन श्रीकंठ उनके पास किसी चंदे का रुपया माँगने आये। शायद नागरी-प्रचार का चंदा था। भूपसिंह उनके स्वभाव पर रीझ गये और धूमधाम से श्रीकंठसिंह का आनंदी के साथ ब्याह हो गया। आनंदी अपने नये घर में आयी, तो यहाँ का रंग-ढंग कुछ और ही देखा। जिस टीम-टाम की उसे बचपन से ही आदत पड़ी हुई थी, वह यहां नाम-मात्र को भी न थी। हाथी-घोड़ों का तो कहना ही क्या, कोई सजी हुई सुंदर बहली तक न थी। रेशमी स्लीपर साथ लायी थी; पर यहाँ बाग कहाँ। मकान में खिड़कियाँ तक न थीं, न जमीन पर फर्श, न दीवार पर तस्वीरें। यह एक सीधा-सादा देहाती गृहस्थी का मकान था; किन्तु आनंदी ने थोड़े ही दिनों में अपने को इस नयी अवस्था के ऐसा अनुकूल बना लिया, मानों उसने विलास के सामान कभी देखे ही न थे।

एक दिन दोपहर के समय लालबिहारी सिंह दो चिड़िया लिये हुए आया और भावज से बोला-जल्दी से पका दो, मुझे भूख लगी है। आनंदी भोजन बनाकर उसकी राह देख रही थी। अब वह नया व्यंजन बनाने बैठी। हांड़ी में देखा, तो घी पाव-भर से अधिक न था। बड़े घर की बेटी, किफायत क्या जाने। उसने सब घी मांस में डाल दिया। लालबिहारी खाने बैठा, तो दाल में घी न था, बोला-दाल में घी क्यों नहीं छोड़ा?

आनंदी ने कहा-घी सब माँस में पड़ गया। लालबिहारी जोर से बोला-अभी परसों घी आया

है। इतना जल्द उठ गया?
आनंदी ने उत्तर दिया-आज तो कुल पाव-भर रहा होगा। वह सब मैंने मांस में डाल दिया।

जिस तरह सूखी लकड़ी जल्दी से जल उठती है, उसी तरह क्षुधा से बावला मनुष्य जरा-जरा सी बात पर तिनक जाता है। लालबिहारी को भावज की यह ढिठाई बहुत बुरी मालूम हुई, तिनक कर बोला-मैके में तो चाहे घी की नदी बहती हो !

स्त्री गालियाँ सह लेती हैं, मार भी सह लेती हैं; पर मैके की निंदा उनसे नहीं सही जाती। आनंदी मुँह फेर कर बोली-हाथी मरा भी, तो नौ लाख का। वहाँ इतना घी नित्य नाई-कहार खा जाते हैं। लालबिहारी जल गया, थाली उठाकर पलट दी, और बोला-जी चाहता है, जीभ पकड़ कर खींच लूँ। आनंद को भी क्रोध आ गया। मुँह लाल हो गया, बोली-वह होते तो आज इसका मजा चखाते।

अब अपढ़, उजड्ड ठाकुर से न रहा गया। उसकी स्त्री एक साधारण जमींदार की बेटी थी। जब जी चाहता, उस पर हाथ साफ कर लिया करता था। खड़ाऊँ उठाकर आनंदी की ओर जोर से फेंकी, और बोला-जिसके गुमान पर भूली हुई हो, उसे भी देखूँगा और तुम्हें भी।

आनंदी ने हाथ से खड़ाऊँ रोकी, सिर बच गया; पर अँगली में बड़ी चोट आयी। क्रोध के मारे हवा से हिलते पत्ते की भाँति काँपती हुई अपने कमरे में आ कर खड़ी हो गयी। स्त्री का बल और साहस, मान और मर्यादा पति तक है। उसे अपने पति के ही बल और पुरुषत्व का घमंड होता है। आनंदी खून का घूँट पी कर रह गयी।

श्रीकंठ सिंह शनिवार को घर आया करते थे। वृहस्पति को यह घटना हुई थी। दो दिन तक आनंदी कोप-भवन में रही। न कुछ खाया न पिया, उनकी बाट देखती रही। अंत में शनिवार को वह नियमानुकूल संध्या समय घर आये और बाहर बैठ कर कुछ इधर-उधर की बातें, कुछ देश-काल संबंधी समाचार तथा कुछ नये मुकदमों आदि की चर्चा करने लगे। यह वार्तालाप दस बजे रात तक होता रहा। गाँव के भद्र पुरुषों को इन बातों में ऐसा आनंद मिलता था कि खाने-पीने की भी सुधि न रहती थी। श्रीकंठ को पिंड छुड़ाना मुश्किल हो जाता था। ये दो-तीन घंटे आनंदी ने बड़े कष्ट से काटे ! किसी तरह भोजन का समय आया। पंचायत उठी। एकांत हुआ, तो लालबिहारी ने कहा-भैया, आप जरा भाभी को समझा दीजिएगा कि मुँह सँभाल कर बातचीत किया करें, नहीं तो एक दिन अनर्थ हो जायगा।

बेनीमाधव सिंह ने बेटे की ओर साक्षी दी-हाँ, बहू-बेटियों का यह स्वभाव अच्छा नहीं कि मर्दों के मूँह लगें।

लालबिहारी-वह बड़े घर की बेटी हैं, तो हम भी कोई कुर्मी-कहार नहीं है। श्रीकंठ ने चिंतित स्वर से पूछा-आखिर बात क्या हुई?

लालबिहारी ने कहा-कुछ भी नहीं; यों ही आप ही आप उलझ पड़ीं। मैके के सामने हम लोगों को कुछ समझती ही नहीं।

श्रीकंठ खा-पीकर आनंदी के पास गये। वह भरी बैठी थी। यह हजरत भी कुछ तीखे थे। आनंदी ने पूछा-चित्त तो प्रसन्न है।

श्रीकंठ बोले-बहुत प्रसन्न है; पर तुमने आजकल घर में यह क्या उपद्रव मचा रखा है? आनंदी की त्योरियों पर बल पड़ गये, झुँझलाहट के मारे बदन में ज्वाला-सी दहक उठी। बोली-जिसने तुमसे यह आग लगायी है, उसे पाऊँ, मुँह झुलस दूँ।

श्रीकंठ-इतनी गरम क्यों होती हो, बात तो कहो।

आनंदी-क्या कहूँ, यह मेरे भाग्य का फेर है ! नहीं तो गँवार छोकरा, जिसको चपरासगिरी करने का भी शऊर नहीं, मुझे खड़ाऊँ से मार कर यों न अकड़ता।

श्रीकंठ-सब हाल साफ-साफ कहा, तो मालूम हो। मुझे तो कुछ पता नहीं।

आनंदी-परसों तुम्हारे लाड़ले भाई ने मुझसे मांस पकाने को कहा। घी हाँडी में पाव-भर से अधिक न था। वह सब मैंने मांस में डाल दिया। जब खाने बैठा तो कहने लगा-दल में घी क्यों नहीं है? बस, इसी पर मेरे मैके को बुरा-भला कहने लगा-मुझसे न रहा गया। मैंने कहा कि वहाँ इतना घी तो नाई-कहार खा जाते हैं, और किसी को जान भी नहीं पड़ता। बस इतनी सी बात पर इस अन्यायी ने मुझ पर खड़ाऊँ फेंक मारी। यदि हाथ से न रोक लूँ, तो सिर फट जाय। उसी से पूछो, मैंने जो कुछ कहा है, वह सच है या झूठ।

श्रीकंठ की ऑखें लाल हो गयीं। बोले-यहाँ तक हो गया, इस छोकरे का यह साहस ! आनंदी स्त्रियों के स्वभावानुसार रोने लगी; क्योंकि ऑसू उनकी पलकों पर रहते हैं। श्रीकंठ बड़े धैर्यवान् और शांति पुरुष थे। उन्हें कदाचित् ही कभी क्रोध आता था; स्त्रियों के ऑसू पुरुष की क्रोधाग्नि भड़काने में तेल का काम देते हैं। रात भर करवटें बदलते रहे। उद्विग्नता के कारण पलक तक नहीं झपकी। प्रात:काल अपने बाप के पास जाकर बोले-दादा, अब इस घर में मेरा निबाह न होगा।

इस तरह की विद्रोह-पूर्ण बातें कहने पर श्रीकंठ ने कितनी ही बार अपने कई मित्रों को आड़े हाथों लिया था; परन्तु दुर्भाग्य, आज उन्हें स्वयं वे ही बातें अपने मुँह से कहनी पड़ी ! दूसरों को उपदेश देना भी कितना सहज है!
बेनीमाधव सिंह घबरा उठे और बोले-क्यों?

श्रीकंठ-इसलिए कि मुझे भी अपनी मान-प्रतिष्ठा का कुछ विचार है। आपके घर में अब अन्याय और हठ का प्रकोप हो रहा है। जिनको बड़ों का आदर-सम्मान करना चाहिए, वे उनके सिर चढ़ते हैं। मैं दूसरे का नौकर ठहरा घर पर रहता नहीं। यहाँ मेरे पीछे स्त्रियों पर खड़ाऊँ और जूतों की बौछारें होती हैं। कड़ी बात तक चिन्ता नहीं। कोई एक की दो कह ले, वहाँ तक मैं सह सकता हूँ किन्तु यह कदापि नहीं हो सकता कि मेरे ऊपर लात-घूँसे पड़ें और मैं दम न मारुँ।

बेनीमाधव सिंह कुछ जवाब न दे सके। श्रीकंठ सदैव उनका आदर करते थे। उनके ऐसे तेवर देखकर बूढ़ा ठाकुर अवाक् रह गया। केवल इतना ही बोला-बेटा, तुम बुद्धिमान होकर ऐसी बातें करते हो? स्त्रियाँ इस तरह घर का नाश कर देती है। उनको बहुत सिर चढ़ाना अच्छा नहीं।

श्रीकंठ-इतना मैं जानता हूँ, आपके आशीर्वाद से ऐसा मूर्ख नहीं हूँ। आप स्वयं जानते हैं कि मेरे ही समझाने-बुझाने से, इसी गाँव में कई घर सँभल गये, पर जिस स्त्री की मान-प्रतिष्ठा का ईश्वर के दरबार में उत्तरदाता हूँ, उसके प्रति ऐसा घोर अन्याय और पशुवत् व्यवहार मुझे असह्य है। आप सच मानिए, मेरे लिए यही कुछ कम नहीं है कि लालबिहारी को कुछ दंड नहीं होता।
अब बेनीमाधव सिंह भी गरमाये। ऐसी बातें और न सुन सके। बोले-लालबिहारी तुम्हारा भाई है। उससे जब कभी भूल-चूक हो, उसके कान पकड़ो लेकिन.
श्रीकंठ–लालबिहारी को मैं अब अपना भाई नहीं समझता।
बेनीमाधव सिंह-स्त्री के पीछे?
श्रीकंठ–जी नहीं, उसकी क्रूरता और अविवेक के कारण।

दोनों कुछ देर चुप रहे। ठाकुर साहब लड़के का क्रोध शांत करना चाहते थे, लेकिन यह नहीं स्वीकार करना चाहते थे कि लालबिहारी ने कोई अनुचित काम किया है। इसी बीच में गाँव के और कई सज्जन हुक्के-चिलम के बहाने वहाँ आ बैठे। कई स्त्रियों ने जब यह सुना कि श्रीकंठ पत्नी के पीछे पिता से लड़ने की तैयार हैं, तो उन्हें बड़ा हर्ष हुआ। दोनों पक्षों की मधुर वाणियाँ सुनने के लिए उनकी आत्माएँ तिलमिलाने लगीं। गाँव में कुछ ऐसे कुटिल मनुष्य भी थे, जो इस कुल की नीतिपूर्ण गति पर मन ही मन जलते थे। वे कहा करते थे–श्रीकंठ अपने बाप से दबता

है, इसीलिए वह दब्बू है। उसने विद्या पढ़ी, इसलिए वह किताबों का कीड़ा है। बेनीमाधव सिंह उसकी सलाह के बिना कोई काम नहीं करते, यह उनकी मूर्खता है। इन महानुभावों की शुभकामनाएँ आज पूरी होती दिखायी दीं। कोई हुक्का पीने के बहाने और कोई लगान की रसीद दिखाने आ कर बैठ गया। बेनीमाधव सिंह पुराने आदमी थे। इन भावों को ताड़ गये। उन्होंने निश्चय किया चाहे कुछ ही क्यों न हो, इन द्रोहियों को ताली बजाने का अवसर न दूँगा। तुरंत कोमल शब्दों में बोले-बेटा, मैं तुमसे बाहर नहीं हूँ। तम्हारा जो जी चाहे करो, अब तो लड़के से अपराध हो गया।

इलाहाबाद का अनुभव-रहित झल्लाया हुआ ग्रेजुएट इस बात को न समझ सका। उसे डिबेटिंग-क्लब में अपनी बात पर अड़ने की आदत थी, इन हथकंडों की उसे क्या खबर? बाप ने जिस मतलब से बात पलटी थी, वह उसकी समझ में न आया। बोला–लालबिहारी के साथ अब इस घर में नहीं रह सकता।

बेनीमाधव–बेटा, बुद्धिमान लोग मूर्खों की बात पर ध्यान नहीं देते। वह बेसमझ लड़का है। उससे जो कुछ भूल हुई, उसे तुम बड़े होकर क्षमा करो।
श्रीकंठ–उसकी इस दुष्टता को मैं कदापि नहीं सह सकता। या तो वही घर में रहेगा, या मैं ही। आपको यदि वह अधिक प्यारा है, तो मुझे विदा कीजिए, मैं अपना भार आप सँभाल लूँगा। यदि मुझे रखना चाहते हैं तो उससे कहिए, जहाँ चाहे चला जाय। बस यह मेरा अंतिम निश्चय है।

लालबिहारी सिंह दरवाजे की चौखट पर चुपचाप खड़ा बड़े भाई की बातें सुन रहा था। वह उनका बहुत आदर करता था। उसे कभी इतना साहस न हुआ था कि श्रीकंठ के सामने चारपाई पर बैठ जाय, हुक्का पी ले या पान खा ले। बाप का भी वह इतना मान न करता था। श्रीकंठ का भी उस पर हार्दिक स्नेह था। अपने होश में उन्होंने कभी उसे घुड़का तक न था। जब वह इलाहाबाद से आते, तो उसके लिए कोई न कोई वस्तु अवश्य लाते। मुगदर की जोड़ी उन्होंने ही बनवा दी थी। पिछले साल जब उसने अपने से ड्यौढ़े जवान को नागपंचमी के दिन दंगल में पछाड़ दिया, तो उन्होंने पुलकित होकर अखाड़े में ही जा कर उसे गले लगा लिया था, पाँच रुपये के पैसे लुटाये थे। ऐसे भाई के मुँह से आज ऐसी हृदय-विदारक बात सुनकर लालबिहारी को बड़ी ग्लानि हुई। वह फूट-फूट कर रोने लगा। इसमें संदेह नहीं कि अपने किये पर पछता रहा था। भाई के आने से एक दिन पहले से उसकी छाती धड़कती थी कि देखूँ भैया क्या कहते हैं। मैं उनके सम्मुख कैसे जाऊँगा, उनसे कैसे बोलूँगा, मेरी आँखें उनके सामने कैसे उठेगी। उसने समझा था कि भैया मुझे बुलाकर समझा देंगे। इस आशा के विपरीत आज उसने उन्हें निर्दयता

की मूर्ति बने हुए पाया। वह मूर्ख था। परंतु उसका मन कहता था कि भैया मेरे साथ अन्याय कर रहे हैं।

यदि श्रीकंठ उसे अकेले में बुलाकर दो-चार बातें कह देते; इतना ही नहीं दो-चार तमाचे भी लगा देते तो कदाचित् उसे इतना दु:ख न होता; पर भाई का यह कहना कि अब मैं इसकी सूरत नहीं देखना चाहता, लालबिहारी से सहा न गया ! वह रोता हुआ घर आया। कोठारी में जा कर कपड़े पहने, ऑंखें पोंछी, जिसमें कोई यह न समझे कि रोता था। तब आनंदी के द्वार पर आकर बोला–भाभी, भैया ने निश्चय किया है कि वह मेरे साथ इस घर में न रहेंगे। अब वह मेरा मुँह नहीं देखना चाहते; इसलिए अब मैं जाता हूँ। उन्हें फिर मुँह न दिखाऊँगा ! मुझसे जो कुछ अपराध हुआ, उसे क्षमा करना।
यह कहते-कहते लालबिहारी का गला भर आया।

जिस समय लालबिहारी सिंह सिर झुकाये आनंदी के द्वार पर खड़ था, उसी समय श्रीकंठ सिंह भी ऑंखें लाल किये बाहर से आये। भाई को खड़ा देखा, तो घृणा से ऑंखें फेर लीं, और कतरा कर निकल गये। मानों उसकी परछाही से दूर भागते हों।
आनंदी ने लालबिहारी की शिकायत तो की थी, लेकिन अब मन में पछता रही थी वह स्वभाव से ही दयावती थी। उसे इसका तनिक भी ध्यान न था कि बात इतनी बढ़ जायगी। वह मन में अपने पति पर झुँझला रही थी कि यह इतने गरम क्यों होते हैं। उस पर यह भय भी लगा हुआ था कि कहीं मुझसे इलाहाबाद चलने को कहें, तो कैसे क्या करुँगी। इस बीच में जब उसने लालबिहारी को दरवाजे पर खड़े यह कहते सुना कि अब मैं जाता हूँ, मुझसे जो कुछ अपराध हुआ, क्षमा करना, तो उसका रहा-सहा क्रोध भी पानी हो गया। वह रोने लगी। मन का मैल धोने के लिए नयन-जल से उपयुक्त और कोई वस्तु नहीं है।

श्रीकंठ को देखकर आनंदी ने कहा–लाला बाहर खड़े बहुत रो रहे हैं।
श्रीकंठ-तो मैं क्या करूँ?
आनंदी–भीतर बुला लो। मेरी जीभ में आग लगे ! मैंने कहॉ से यह झगड़ा उठाया।
श्रीकंठ-मैं न बुलाऊँगा।
आनंदी-पछताओगे। उन्हें बहुत ग्लानि हो गयी है, ऐसा न हो, कहीं चल दें।
श्रीकंठ न उठे। इतने में लालबिहारी ने फिर कहा-भाभी, भैया से मेरा प्रणाम कह दो। वह मेरा मुँह नहीं देखना चाहते; इसलिए मैं भी अपना मुँह उन्हें न दिखाऊँगा।
लालबिहारी इतना कह कर लौट पड़ा, और शीघ्रता से दरवाजे की ओर बढ़ा। अंत में आनंदी कमरे

से निकली और उसका हाथ पकड़ लिया। लालबिहारी ने पीछे फिर कर देखा और ऑखों में ऑसू भरे बोला-मुझे जाने दो।

आनंदी कहाँ जाते हो?
लालबिहारी-जहाँ कोई मेरा मुँह न देखे।
आनंदी–मैं न जाने दूँगी?
लालबिहारी–मैं तुम लोगों के साथ रहने योग्य नहीं हूँ।
आनंदी–तुम्हें मेरी सौगंध अब एक पग भी आगे न बढ़ाना।
लालबिहारी–जब तक मुझे यह न मालूम हो जाय कि भैया का मन मेरी तरफ से साफ हो गया, तब तक मैं इस घर में कदापि न रहूँगा।
आनंदी–मैं ईश्वर को साक्षी दे कर कहती हूँ कि तुम्हारी ओर से मेरे मन में तनिक भी मैल नहीं है।

अब श्रीकंठ का हृदय भी पिघला। उन्होंने बाहर आकर लालबिहारी को गले लगा लिया। दोनों भाई खूब फूट-फूट कर रोये। लालबिहारी ने सिसकते हुए कहा–भैया, अब कभी मत कहना कि तुम्हारा मुँह न देखूँगा। इसके सिवा आप जो दंड देंगे, मैं सहर्ष स्वीकार करूँगा।

श्रीकंठ ने कॉपते हुए स्वर में कहा-लल्लू ! इन बातों को बिल्कुल भूल जाओ। ईश्वर चाहेगा, तो फिर ऐसा अवसर न आवेगा।
बेनीमाधव सिंह बाहर से आ रहे थे। दोनों भाइयों को गले मिलते देखकर आनंद से पुलकित हो गये। बोल उठे–बड़े घर की बेटियाँ ऐसी ही होती हैं। बिगड़ता हुआ काम बना लेती हैं।
गॉव में जिसने यह वृत्तांत सुना, उसी ने इन शब्दों में आनंदी की उदारता को सराहा–'बड़े घर की बेटियाँ ऐसी ही होती हैं।'

# आपकी बात

डॉक्टर वेदुला जी नमस्ते

आप को मेरा धन्यवाद कि आपने अपने विभाग की ई पत्रिका 'हिंदी भारती' के मार्च-अप्रैल 'बनारस विशेषांक' को मेरे साथ साझा किया। मैं वर्ष 2012 में 1 दिन के लिए बनारस गई थी। इस पत्रिका के सभी लेख पढ़ने के बाद मुझे ऐसा प्रतीत हुआ कि उस सांस्कृतिक नगरी में मैं बहुत कुछ छोड़ आई हूँ। सभी छात्राओं ने पूरे शहर का यानी काशी विश्वनाथ से लेकर सारनाथ, काशी विश्वविद्यालय, लमही, भारतेंदु जी का घर, बनारस के घाट और गलियों का इतना विस्तार पूर्वक तथा जीवंत वर्णन किया है कि हम सभी के हृदय में उत्कंठा होती है कि अपने ऐतिहासिक नगरी को एक बार अवश्य घूम कर देखें। मैं अपनी बात एक छोटी सी कविता के माध्यम से बताना चाहूंगी -

दीप्ति साहू ने पहुंचाया
हमें बनारस की गलियों में
कर दिया तरोताजा
यादों को हमारे मन में
बाँगी हंसदा ने याद दिलाया
प्रेमचंद के नायक नायिकाओं की
रूबरू कराया जिंदगी के
कठोर सच्चाईयों से
सारे लेख ने लालसा जगा दी
फिर से बनारस जाने की
विस्तृत वर्णन से खोल दिये
झरोखे यादों के
एहसास कराया महिमा अपनी
ऐतिहासिक नगरी बनारस की

**शकुंतला बेहुरा**
**वैज्ञानिक (DST), Centre of Biotechnology,**
**School of Pharmaceutical Sciences, SOA University,**
**Bhubaneswar-751030**

अन्य अंकों की ही भांति यह अंक भी रचना, संयोजन, लेखन एवं संपादन की दृष्टि से उत्कृष्ट बन पड़ा है। जिन्होंने बनारस देखा है उन्हें पत्रिका में संयोजित रचनाएं बनारस के घाटों, लमही के प्रांगण, नागरी प्रचारिणी सभा के ग्रंथालय को जीवंत करने में सक्षम रही है। दशाश्वमेध घाट से लेकर विश्वविद्यालय को साकार प्रस्तुत करने में विद्यार्थियों की लेखनी सक्षम रही है। आप सभी को अनेक अनेक बधाई शुभकामनाएं।

**प्रोफेसर एस. के. चतुर्वेदी**
**भू. पू. विभागाध्यक्ष, राजनीति शास्त्र विभाग**
**भू. पू. प्रो वाईस चांसलर, मेरठ विश्वविद्यालय**

मुझे कोई शब्द नहीं मिल रहे हैं कि मैं क्या लिखूं? मैंने जब से बनारस के बारे में अपने दोस्तों के द्वारा लिखे आर्टिकल पढ़ें, जिसमें बनारस की गलियों से लेकर गंगा घाट की आरती, बनारस हिंदू विश्वविद्यालय, भारतेंदु जी का घर, काशी विश्वनाथ मंदिर और प्रेमचंद्र जी के मूल निवास के बारे में इतनी रोचक पूर्ण बातें लिखी हुई है कि मेरा मन खुश हो गया। यात्रा वृतांत को पढ़ते ही ऐसा प्रतीत हुआ मानो मैंने भी उनके साथ सफर कर लिया हो। घाटों के बारे में पढ़ने से मुझमें भी जिज्ञासा हुई कि मैं भी अगली बार बनारस जरूर जाऊं।

**संगीता प्रज्ञा प्रधान, +3 प्रथम वर्ष**

बनारस यात्रा के लेख पढ़ने के बाद मुझे बहुत दुःख हुआ कि मैं वह सब सुंदर दृश्य नहीं देख पाई। पढ़ने के बाद मुझे सबसे ज्यादा यह अच्छा लगा कि बनारस की गलियाँ और गंगा के तट पर बसा बनारस एक सभ्यता को साकार करता है। बनारस गलियों की शहर है। वहां जितने लंबे घर हैं उतनी ही लंबी और पतली उनकी गलियों हैं। कोई अनजान व्यक्ति गली में जाए तो वहां से निकल ना पाए। पर उन गलियों में सब कुछ मिलता है। जिन गलियों में दोनों लोग मिलकर नहीं जा सकते, उन गलियों से गाड़ियां आती जाती है।

**मानिनी खिलार, +3 प्रथम वर्ष**

हिंदी भारती बनारस विशेषांक पत्रिका में मुझे सबसे ज्यादा 'बनारस में वो तीन दिन' लेख, जिसे बांगी हंसदा ने लिखा है, सबसे अच्छा लगा, जिसमें मुझे बनारस की हर चीज को महसूस करने को मिली। नागरी प्रचारिणी सभा, भारतेंदु जी के भवन, वहां की गलियाँ, विश्वनाथ जी का

मंदिर, लमही गांव और आखिर में काशी हिंदू विश्वविद्यालय, ये सब पढ़कर मुझे ये महसूस हुआ की यह शैक्षणिक यात्रा नहीं जा कर मैंने गलती कर दी। अगली बार अगर मुझे बनारस जाने का मौका मिला तो मैं जरूर जाऊंगी

**करीना कादिरी, +3 प्रथम वर्ष**

दुनिया का सबसे पुराना शहर और पवित्र शहर बनारस हिंदू धर्म के पवित्र शहरों में से एक है, बनारस का पहचान गंगा घाट से होती है। मैंने अपनी बड़ी दीदियों और सहपाठियों द्वारा लिखे सारे आर्टिकल पढ़ें। मुझे सब कुछ बेहद प्रिय लगे। हालांकि मुझे अफसोस इस बात का है कि मैं ना जा सकी। आर्टिकल में सब कुछ बहुत अच्छा लिखा था। मैंने पहले से ही बनारसी साड़ी, बनारसी पान, मिठाई वहां के मंदिरों के बारे में सुना था। बनारस में प्रेमचंद जी का निवास अर्थात उनके गांव का घर अत्यंत ही मनोरम वर्णन लेखों में है। सारनाथ स्तूप वहां का अहम हिस्सा है। मेरे दोस्तों ने मुझे बताया कि वहां पर उन्होंने एक प्रकार की कुल्फी खाई जिसे बनारस में निमिष या मलाईयू नाम से जाना जाता है, वह बहुत ही स्वादिष्ट थी। वहां पर गंगा घाट की आरती हुई जो बहुत ही सुंदर प्रतीत हो रही थी। मैंने यह भी सुना था, कि वहां की गलियां बहुत छोटी छोटी है, एक जाता तो दूसरा अटक जाता है। काशी हिंदू विश्वविद्यालय का पुस्तकालय बहुत ही बड़ा है। और ऐसी बहुत बातें हैं जितना भी लिखूं कम पड़ेगा। मुझे इस बात का बेहद दुख है कि मैं उनके साथ जा ना सकी।

**इप्सिता रानी साहू, +3 प्रथम वर्ष**

मैंने अपने सहपाठी बांगी के अनुभवों को पढ़ा, जिसको पढ़ कर मुझे ऐसा प्रतीत हुआ जैसे मैंने भी बनारस देख लिया हो। मैंने अपने दोस्तों से जितना सुना है, की बनारस एक सुंदर और रहस्य में गलियों का शहर है, वह पढ़ कर और भी मुझको आनंद आ गया। मैं बनारस के बारे में जितना भी लिखूं कम होगा। यह पढ़कर और अपने सहपाठियों से सुनकर इतना अच्छा लगा है, तो जो वहां गए उनका अनुभव कितना अच्छा रहा होगा। प्रेमचंद जी के गांव को देखने की मेरी बहुत इच्छा थी पर दुःख है, कि मैं देख नहीं पाई। बनारस के काशी हिंदू विश्वविद्यालय को देखना चाहती थी, पर देख नहीं पाई यदि मुझे दूसरा मौका मिले तो मैं वहां जरूर जाना चाहूंगी अपनी प्रतिक्रिया देते हुए मुझे बहुत खुशी हो रही है।

**पूजा डाकुआ, +3 प्रथम वर्ष**

बनारस ना जाने का बहुत दुःख है। वेदुला मैडम को धन्यवाद देना चाहती हूं क्योंकि इस पत्रिका को पढ़कर ऐसा लगता है कि जैसे हम भी बनारस घूम रहे हैं, सबसे अच्छा बनारस का गलियों के बारे में जानकारी लगी।

**श्रद्धांजलि जेना, +3 प्रथम वर्ष**

# बड़े भाई साहब

https://youtu.be/fP9XbtBbxxc

# दूध का दाम

https://youtu.be/djb8gxvOaXU

# यादों के गलियारों से

**कोविड - 19 वैश्विक महामारी की वजह से विभाग की चित्र स्मृतियाँ भी कम्प्यूटर के पटल तक सीमित रह गई हैं। आशा है अगले अंक में हम खुशियों से भरी स्मृतियाँ दे पायेंगे।**

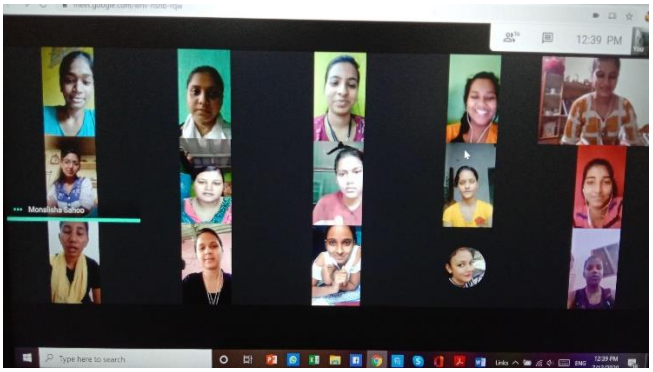

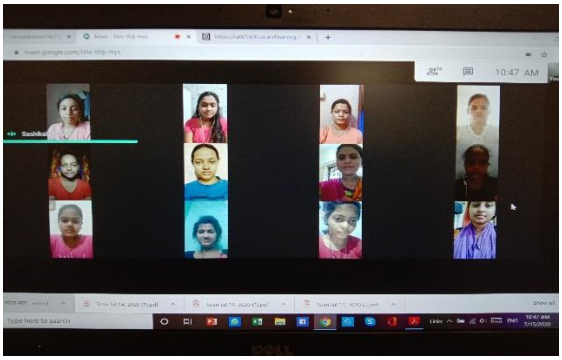

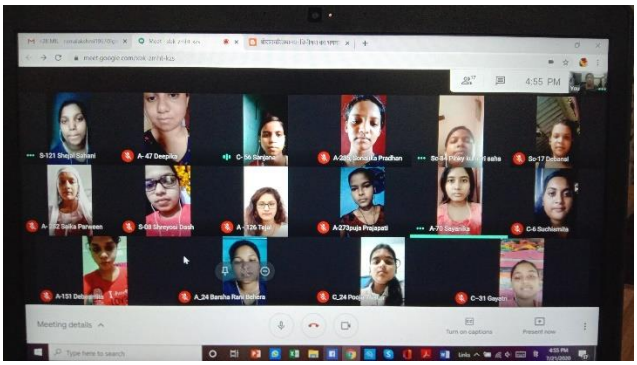

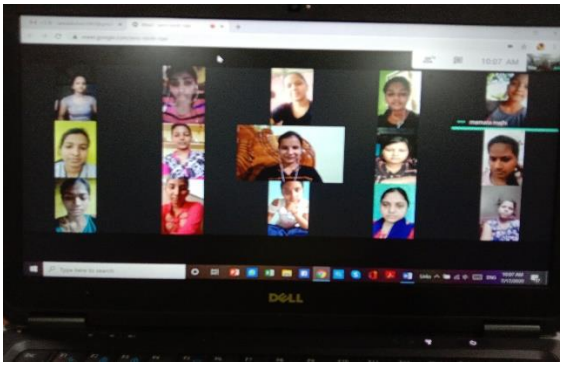

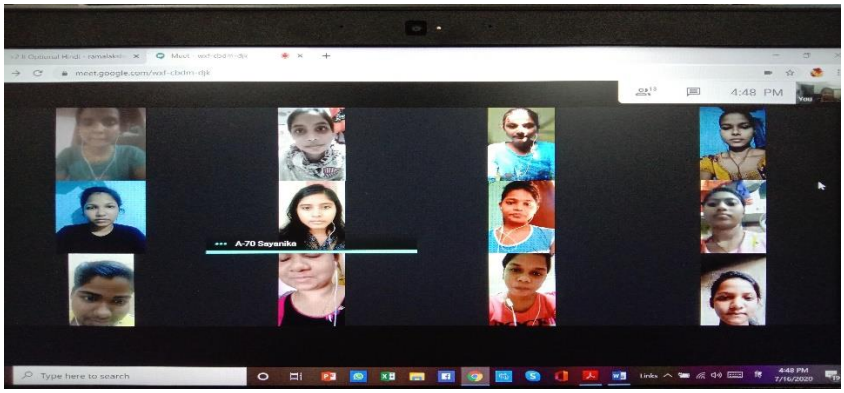











# धन्यवाद